कुरुक्षेत्र

सितम्बर 1991

तीन रुपये

ग्रामीण विकास में सहकारिता

वर्ष—36, अंक 11, अश्विन-कार्तिक शक-1913

सम्पादक : राम बोध मिश्र
सहायक सम्पादक : गुरचरण लाल सूबरा
उप सम्पादक : ललिता जोशी
विज्ञापन प्रबंधक : बैजनाथ राजभर
व्यापार व्यवस्थापक : जसवंत सिंह
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : शकुन्तला
उत्पादन अधिकारी : के. आर. कृष्णन्

आवरण पृष्ठों की साज सज्जा : एम. एम. परमार
चित्र : फोटो प्रभाग एवं रमेश चन्द्र ग्रामीण विकास विभाग
एक प्रति : 3.00 रु. वार्षिक चंदा : 30 रु.

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास विभाग का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

विषय सूची

ग्रामीण विकास में सहकारिता 3
कु. पूनम शर्मा
ग्राम विकास एवम् आधुनिक तकनीक 8
हरे कृष्ण सिंह
पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोत एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था 10
डा. राम अवतार शर्मा
भारतीय ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं एवं स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका 14
अमरकान्त पाण्डेय, नीलम गुप्ता
पंचायती व्यवस्था का दूसरा रूप है सहकारिता 17
हरि बिश्नोई
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकिंग का सिंहावलोकन 19
कृष्णगोपाल गुप्ता
उत्तर प्रदेश में ग्रामीण निर्बल आवास 21
डा. गजेन्द्रपाल सिंह
सौर-ऊर्जा 22
मोहन चन्द्र मन्टन
ग्रामीण विकास और सहकारिता 23
जगदम्बी प्रसाद यादव
उत्तर प्रदेश की खुशहाली में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का योगदान 25
डा. राकेश अग्रवाल
नया केन्द्रीय बजट : अर्थव्यवस्था में सुधार के व्यावहारिक उपाय 31
ओम प्रकाश दत्त
ऊसर भूमि का सुधार एवं विधियां 35
डा. (कु.) पुष्पा अग्रवाल
सहकारिता आंदोलन : कुछ मुख्य पहलू 39
सुभाष चन्द्र 'सत्य'
सहकारिता की मुंडेर पर सम्पन्नता के दीप 41
पी.सी. सैनी
राजस्थान में कृषि विपणन प्रशासन 43
अमर चन्द सिंघल
सहकारिता में व्यावसायिक विकास योजना 46
डा. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा
यादें मेरे गांव की 47
डा. विनेश चमोला
पशुधन और भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था 48
डा. ओ.पी. गुप्ता
राजस्थान में ग्रामीण विकास की नई योजना "अपना गांव अपना काम" 50
राजेश कुमार गौतम
सहकारी आन्दोलन : विविध आयाम 52
रामकुमार "सेवक"

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि मंत्रालय, ग्रामीण विकास विभाग, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। दूरभाष : 384888

ये बात सिर्फ़ एक नाम की नहीं है. ये बात है एक शुरुआत की. ऐसी बेहतर ज़िन्दगी की शुरुआत जो आप दे सकते है कमला को. कमला का तो भला होगा ही, पर आपको अनुभव होगा एक ऐसे सुख का, एक ऐसे गर्व का, जिसे शब्दों में बताना बहुत मुश्किल है.

काम न तो कठिन है, न इसे चाहिए बहुत ज़्यादा समय. चाहिए तो बस विश्वास, कुछ लगन. अपने पड़ोस के किसी अनपढ़ को अपनाकर हर रोज़ थोड़ा बहुत पढ़ाइए. इतना कि उसे अपना राशन कार्ड बनवाना आ जाए. भले बुरे की पहचान करना आ जाए. वो अन्ध विश्वास की धुँध के परे देख सके. छोटे स्वस्थ परिवार का मतलब समझ सके. एक बेहतर ज़िन्दगी की नींव रख सके.

आप बस हाथ बढ़ाइए. आपके साथ है राष्ट्रीय साक्षरता मिशन जो आपको शुरुआत की जानकारी दे सकता है. अब कलम उठाइए और साथ दिया कूपन भरकर भेजिए.

ये आज की कमला है

आप इसे अगर कमला बना दें तो कितने गर्व की बात है

सच मानिए, आप भी किसी कमला को ऐसी ज़िन्दगी दे सकते हैं. जिसे देकर आपको होगा एक अनोखा गर्व. गर्व, किसी को नाम देने का. गर्व, किसी की ज़िन्दगी को नई शुरुआत देने का.

चलो पढ़ाएं, कुछ कर दिखाएं

जी हाँ, मैं किसी को पढ़ाकर उसकी ज़िन्दगी बेहतर बनाना चाहता/चाहती हूँ. कृपया मुझे, पढ़ाने की जानकारी इस भाषा में भेजिए : ________

नाम : ________

____

पता : ________

____

____

भेजिए : राष्ट्रीय साक्षरता मिशन
पोस्ट बॉक्स न. ९९९९, नई दिल्ली 110011

डी.ए.वी.पी. 91/41

ग्रामीण विकास में सहकारिता

कु. पूनम शर्मा

सहकारिता व्यवसाय-व्यवस्था का एक विशेष रूप या प्रणाली है। यह वह रूप है जिसमें लोग स्वेच्छा से समानता के आधार पर निर्धारित आर्थिक एवं सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संगठित होते हैं। सहकारिता के दो मुख्य आधार हैं–स्वेच्छा और जनतंत्र। अपनी इच्छा से ही लोग सहकारी समिति के सदस्य बनते हैं। उन पर कोई बाह्य बंधन या दबाव नहीं होता। सहकारी व्यवस्था का सब काम जनतंत्रात्मक ढंग से होता है। इसके सदस्यों के बीच कोई भेदभाव नहीं किया जाता। सबको बराबर समझा जाता है तथा एक जैसे अधिकार व अवसर दिए जाते हैं। इसमें 'एक व्यक्ति, एक वोट' के सिद्धान्त का पालन होता है। इसमें समानता और जनतंत्र की झलक स्पष्ट मिलती है।

सहकारिता के लाभ स्वतः स्पष्ट हैं। इससे श्रम व पूंजी का विरोध व संघर्ष दूर हो जाता है। इससे बीच के अनेक मुनाफाखोरों का भी अन्त हो जाता है, जो दूसरों के शोषण से धनवान बनने का प्रयास करते हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में सामान्यतः सीमित साधन वाले व्यक्तियों, छोटे उत्पादकों, व्यापारियों एवं उपभोक्ताओं को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सहकारिता द्वारा इन निर्धन व पीड़ित वर्गों के हितों की रक्षा की जा सकती है। वास्तव में सहकारिता का प्रादुर्भाव इसी कारण से हुआ। इसका मुख्य उद्देश्य पूंजीवाद-जनित दोषों को निर्मूल करना है। इसके आधार पर संगठित होकर ही कमजोर और निर्धन व्यक्ति उन्नति कर सकते हैं। उनके लिए इससे अच्छा, प्रभावपूर्ण और सरल कोई दूसरा रास्ता नहीं है।

सहकारिता के माध्यम द्वारा लोगों में आत्म-निर्भरता, पारस्परिक सहयोग, संगठन, त्याग, एकता आदि की भावनाएं जागृत हो उठती हैं, जो हर प्रकार की उन्नति के लिए परमावश्यक हैं। इसके अंतर्गत लाभ की भावना का स्थान सार्वजनिक सेवा ले लेती हैं और प्रतियोगिता के स्थान पर सहयोग सबल होने लगता है। इसके अपनाने से समाज को भी अनेक कष्टों और समस्याओं से छुटकारा मिल सकता है। इसके माध्यम से व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए, देश की आर्थिक समृद्धि व सार्वजनिक कल्याण में वृद्धि लाई जा सकती है।

वास्तव में पूंजीवादी तथा समाजवादी दोनों प्रकार की व्यवस्थाओं में सहकारिता श्रेष्ठ ठहराई जाती है। इसके द्वारा व्यक्तिगत स्वार्थ को सीमित रखा जा सकता है और साथ ही नौकरशाही को समाप्त किया जा सकता है। इस प्रकार सहकारिता के माध्यम से बहुत बड़ी सीमा तक पूंजीवाद और समाजवाद के दोषों को दूर कर उनके विभिन्न गुणों से लाभ उठाया जा सकता है। परिणामस्वरूप जन-कल्याण में अधिकतम वृद्धि लाई जा सकती है। यही कारण है कि आज सहकारिता का अधिकाधिक प्रचार हो रहा है।

भारत की जीवन शक्ति गांवों में है। इतनी बड़ी जनसंख्या की सुख-सुविधा, भोजन, वस्त्र एवं अन्य आवश्यकताओं के लिए सहकारिता एवं परस्पराश्रय वरदान है। यह भी निश्चित है कि गांवों की उन्नति से ही भारत की उन्नति है। उत्पादन के लिए जमीन, पूंजी व श्रम की आवश्यकता होती है जिसका गांवों में असमान वितरण है। कहीं श्रम है तो भूमि व पूंजी नहीं, या भूमि है तो पूंजी व श्रम नहीं या यह सब है तो कोई व्यवस्था करने वाला नहीं। शरीर के समुचित विकास के लिए विभिन्न अंगों का सहयोग चाहिए। इसी प्रकार यदि गांव में कम और अधिक साधन-सम्पन्न में समन्वय न होगा, तो जीवन का व्यवस्थित विकास संभव नहीं। इसका एकमात्र उपाय सहकारिता है। कम साधन वाले या किसी कार्यकर्ता-विहीन परिवार का भरण-पोषण सहकारिता से सम्भव है।

कृषि क्षेत्र में सहकारिता की आवश्यकता विशेष रूप से बहुत अधिक है। इसी के सहारे स्थायी रूप से सफलतापूर्वक खेतों को बड़ा किया जा सकता है और खाद, बीज, सिंचाई, ऋण, क्रय-विक्रय आदि की भली प्रकार व्यवस्था की जा सकती है। स्पष्ट है कि इन सुविधाओं की उचित व्यवस्था के फलस्वरूप कृषि-कार्य में लगे लोग कम लागत पर अधिक और अच्छा उत्पादन कर सकेंगे। इससे उनका जीवन-स्तर तो ऊपर उठेगा ही देश के तीव्र आर्थिक विकास में भी बड़ी सहायता मिल सकेगी।

इसी प्रकार छोटे व कुटीर उद्योगों का भी समुचित विकास सहकारिता के आधार पर ही भली प्रकार सम्भव है। इन

उद्योगों का हमारी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान है और इनके विकास के फलस्वरूप हमें अनेक लाभ प्राप्त हो सकते हैं। अतः स्पष्ट है कि देश के आर्थिक और सामाजिक विकास में सहकारिता का महत्वपूर्ण स्थान है।

मोटे तौर पर सहकारिता के अंतर्गत प्राथमिक समितियां, केन्द्रीय सहकारी बैंक तथा राज्य सहकारी बैंक आते हैं। प्राथमिक समितियां सहकारी आन्दोलन की आधारशिला हैं। ये अनेक कार्यों तथा उद्देश्यों के लिए बनाई गई हैं। इनमें से अधिकांश भाग कृषि-सहकारी समितियों का है। केन्द्रीय सहकारी बैंक एक जिले या उसके किसी भाग की प्राथमिक समितियों की देखभाल करते हैं और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें ऋण भी देते हैं। प्राथमिक समितियों के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति भी इनके सदस्य हो सकते हैं। ये सीमित देनदारी का व्यवहार करते हैं। ये बैंक राज्य सहकारी बैंक तथा प्राथमिक समितियों की बीच मिलान या कड़ी का काम करते हैं। राज्य सहकारी बैंक आवश्यकता पड़ने पर इनको ऋण देते हैं और केन्द्रीय बैंक प्राथमिक सहकारी समितियों को ऋण देते हैं। इसके अतिरिक्त, केन्द्रीय सहकारी बैंक जमा स्वीकार करना हुण्डियों तथा चैकों को भुनाने आदि का भी कार्य करते हैं। प्रत्येक राज्य में एक राज्य-सहकारी या शीर्ष बैंक पाया जाता है। यह राज्य के सहकारिता आन्दोलन का निर्देशन करता है। इसका मुख्य कार्य राज्य के केन्द्रीय बैंकों की देखभाल करना है। यह केन्द्रीय बैंकों को ऋण देता है और उनके कार्यों पर नियंत्रण रखता है। इसके अतिरिक्त, यह अन्य बैंकिंग कार्य भी करता है, जैसे कि जमा स्वीकार करना, हुण्डी भुनाना आदि। आवश्यकता पड़ने पर यह राज्य सरकार और रिजर्व बैंक से ऋण लेता है। इसे रिजर्व बैंक से अल्पकालिक और मध्यकालिक ऋण की सुविधाएं प्राप्त हैं।

आज भारत में सहकारिता आन्दोलन संख्या तथा सदस्यता के हिसाब से विश्व के सबसे बड़े आन्दोलनों में से एक है। इसकी विशेषता यह है कि इसका प्रगामी विस्तार हो रहा है और इसमें निरंतर विविधता आ रही है। कृषि क्षेत्र में सहकारी संस्थाएं ऋण संवितरण, उर्वरकों के विनिर्माण और वितरण, विपणन तथा कृषि परिसंस्करण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और इस प्रकार कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने में भारी सहायता प्रदान कर रही हैं। 30 जून 1988 की स्थिति के अनुसार देश में 3.50 लाख सहकारी समितियां हैं जिनकी सदस्य संख्या 15 करोड़ है तथा इन सहकारी समितियों की कार्य पूंजी करीब 48,000 करोड़ रुपये है। यह आन्दोलन अपना विस्तार करता रहता है तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्यकलाप कर रहा है।

1987-88 के दौरान सहकारी कार्यकलापों में महत्वपूर्ण रूप से वृद्धि हुई है। सहकारी समितियों द्वारा वितरित किया गया कृषि ऋण 1987-88 में करीब 4,400 करोड़ रुपये तक पहुंच गया। इसी अवधि के दौरान सहकारी समितियों द्वारा 4,000 करोड़ रुपये मूल्य के कृषि उत्पादों का विपणन किया गया। 1987-88 के दौरान सहकारी समितियों ने करीब 30 लाख मीट्रिक टन उर्वरकों का वितरण किया। इसी अवधि के दौरान सहकारी चीनी मिलों ने 52.6 लाख मीट्रिक टन चीनी का उत्पादन किया जो देश में चीनी के कुल उत्पादन का करीब 57.5 प्रतिशत बैठता है। किसानों को फसल कटाई के बाद की प्रौद्योगिकी संबंधी सहायता उपलब्ध कराने के लिए भंडारण क्षमता का सृजन करना एक आवश्यक कार्य है। 1987-88 के दौरान सहकारी क्षेत्र की संचित भंडारण क्षमता 103 लाख मीट्रिक टन तक पहुंच गई।

सहकारिता के क्षेत्र में आवश्यक आदानों की व्यवस्था करके तथा किसानों के हितों की रक्षा करने के लिए फसल कटाई के बाद की सुविधाएं प्रदान करके कृषि उत्पादन में सहयोग देने पर मुख्य जोर दिया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न आर्थिक कार्यकलापों के लिए सहकारी कार्यक्रमों को बढ़ावा देने और उनका विकास करने के लिए भारत सरकार ने संसद के एक अधिनियम के अंतर्गत सन् 1963 में राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम की स्थापना की थी। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम संवर्धनात्मक और विकासोन्मुखी संस्था है जो कि सहकारी समितियों के माध्यम से विपणन, संसाधन, भण्डारण और किसानों को कृषि आदानों की सप्लाई करने के लिए देशव्यापी योजना तैयार करने और कार्यक्रमों को बढ़ावा देने के प्रति उत्तरदायी है। यह कमजोर वर्गों की सहकारी समितियों जैसे मत्स्य, कुक्कुट, जनजाति सहकारी समितियों, हथकरघा समितियों आदि को बढ़ावा देती हैं। इस निगम ने अपने सात क्षेत्रीय और आठ परियोजना कार्यालय स्थापित किए हैं। यह निगम आठ परियोजना कार्यालयों को परामर्शदायी सेवाएं भी प्रदान कर रहा है। यह निगम वित्त पोषित (विभिन्न सहकारी) संस्थाओं को परामर्शदायी और तकनीकी सेवाएं भी प्रदान करता है जिसके लिए इसने अपनी प्रबंधात्मक/तकनीकी विशेषज्ञता की व्यवस्था की है जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के सलाहकार और प्रौद्योगिकीविद् शामिल किए गए हैं।

सहकारी समितियों को तिलहनों, मोटे अनाजों और दलहनों के समर्थन मूल्य कार्यों में तथा आलू, प्याज और कोपरा के संबंध में विपणन हस्तक्षेप कार्यकलापों में नोडल एजेंसियों के रूप में नामित किया गया है। भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ और राज्य सहकारी विपणन संघों ने इन कार्यों को

संचालित करने के लिए एजेंसियों के रूप में कार्य किया। सरकार की पहल पर और सहायता से राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) और राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एन. सी. डी. सी.) जैसे राष्ट्रीय स्तर के संगठनों के जरिए छोटे तथा सीमान्त किसानों और कमजोर वर्ग के किसानों की सहायता करने तथा पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए सहकारी समितियों की नीतियां, कार्यविधियां और कार्यक्रम बनाए जाते हैं।

भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ (एन. सी. यू. आई.) देश भर में सहकारिता आन्दोलन की एक प्रमुख संस्था है जिसे सहकारिता के क्षेत्र में प्रशिक्षण और शिक्षण के कार्यक्रमों की व्यवस्था और उनमें सहायता प्रदान करने की जिम्मेवारी सौंपी गई है। भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ त्रिवर्षीय आधार पर सहकारी सम्मेलनों का आयोजन करता है जिसमें सहकारी आन्दोलन के प्रत्येक दायरे से प्रतिनिधि, राज्यों के सहकारिता विभागों, केन्द्र सरकार और सहकारी आंदोलन को बढ़ाने और विकसित करने की इच्छुक केन्द्रीय संस्थाओं, जो सहकारी कार्यक्रमों की प्रगति और नीतियों का जायजा लेकर अपनी सिफारिशें करती हैं, के प्रतिनिधि शामिल होते हैं।

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम राज्य सरकारों को ऋण तथा राज सहायता राशियों के रूप में वित्तीय सहायता प्रदान करता है ताकि भिन्न-भिन्न योजनाओं के अनुरूप विकसित सहायता प्रणाली के अंतर्गत विभिन्न सहकारी कार्यक्रमों के लिए वित्तीय व्यवस्था की जा सके। वर्ष 1987-88 के दौरान निगम ने 170.98 करोड़ रुपये की सहायता प्रदान की।

सहकारी विपणन संरचनाओं के तंत्र में 5,923 प्राथमिक विपणन समितियां (मण्डी स्तर की 2,633 सामान्य कार्य समितियां, तिलहनों आदि के संबंध में 3,290 विशेष जिंस समितियां) तथा 157 जिला/केन्द्रीय समितियां, जो कि देश की लगभग सभी महत्वपूर्ण मण्डियों में कार्य कर रही हैं, राज्य स्तर में 29 सामान्य कार्य वाले राज्य सहकारी विपणन संघ तथा 16 विशेष जिंस विपणन संघ और राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ (नेफेड) शामिल हैं।

भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ लि. (नेफेड) ने उत्पादकों को विपणन संबंधी सहायता प्रदान करना जारी रखा। नेफेड राष्ट्रीय स्तर पर सहकारी क्षेत्र में एक नोडल विपणन एजेंसी है। नेफेड तथा राज्य सहकारी विपणन संघ विभिन्न कृषि जिंसों के मामले में मूल्य समर्थन/बाजार हस्तक्षेप संबंधी कार्यकलापों में अहम भूमिका निभा रहे हैं। नेफेड ने जिंसों को प्रत्यक्ष खरीद करने के अलावा कुछ राज्य संघों के साथ संयुक्त रूप से कार्य किया। नेफेड ने तिलहन जैसी चुनिंदा कृषि जिंसों के संबंध में भारत सरकार की मूल्य समर्थन योजना को क्रियान्वित किया तथा आलू, प्याज आदि जैसी कुछ जिंसों के संबंध में बाजार हस्तक्षेप संबंधी कार्य भी किया। इसने तिल, रामतिल, प्याज और मोटे अनाजों के निर्यात के संबंध में व्यवस्थापक एजेंसी के रूप में कार्य किया। 1987-88 में नेफेड का कुल कारोबार बढ़कर 180 करोड़ रुपये हो गया।

कृषि उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने की नीति में किसानों को उनके उत्पादों का अच्छा मूल्य दिलाना भी निहित है। यह उद्देश्य मूल्य समर्थन एवं विपणन हस्तक्षेप उपायों के जरिए प्राप्त किया जाना है, जिनके कार्यान्वयन में सहकारी समितियां अहम् भूमिका निभा रही हैं। केन्द्र सरकार ने दलहनों, मोटे अनाज और तिलहनों के मामले में मूल्य समर्थन कार्यों के लिए भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ लिमिटेड को एक नोडल एजेंसी नियुक्त किया है। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार के परामर्श पर उत्पादकों को मदद देने के उपाय के रूप में नेफेड और राज्य विपणन संघों ने आलू, प्याज ओर कोपरा का सांकेतिक सहमत मूल्य/हस्तक्षेप मूल्यों पर विपणन किया।

कृषि उत्पाद की परिसंस्करण प्रक्रिया का ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बहुत बड़ा महत्व है, चूंकि इससे किसानों को बेहतर तथा अधिक आय प्राप्त होती है, अतः सहकारी कृषि परिसंस्करण उद्योगों का, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, पिछले 30 वर्षों से भी अधिक समय से संवर्धन और विकास करने के प्रयास किए गए हैं। एतत् प्रयासों के फलस्वरूप संगठित सहकारी कृषि परिसंस्करण इकाइयों की संख्या 1987-88 तक बढ़कर 2,402 हो गई है जो 1962-63 में 326 थी। इसमें से 1363 इकाइयों ने राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम से 467.46 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता का लाभ उठाया, इनमें से 1,273 इकाइयां स्थापित की जा चुकी हैं। सहकारी कृषि उद्योगों में से प्रमुख उद्योग हैं—सहकारी चीनी मिलें, सहकारी कताई मिलें, चावल मिलें, दाल मिलें, कपास गिनिंग और प्रोसेसिंग यूनिटें, तेल मिलें, जूट गांठ निर्माण इकाइयां और फल तथा सब्जी परिसंस्करण इकाइयां।

समस्त सहकारी कृषि परिसंस्करण उद्योगों में सहकारी चीनी मिलों ने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। लाइसेंस शुदा/पंजीकृत यूनिटों की संख्या 232 पर टिकी रही। इनमें से 211 यूनिटें मार्च, 1988 तक स्थापित हो चुकी हैं। 1987-88 के चीनी मौसम (अक्तूबर, 1987 से सितम्बर, 1988 तक) में सहकारी चीनी मिलों ने 52.6 मीट्रिक टन चीनी का उत्पादन किया जो कि 91.5 लाख मीट्रिक टन चीनी के राष्ट्रीय उत्पादन का लगभग 57.5 प्रतिशत है।

चीनी मिलों की एकमुश्त लागत में निरंतर वृद्धि होने से चीनी मिलों का लाभ उप-उत्पादों के उद्योग पर केन्द्रित हो रहा है। सहकारी चीनी मिलों ने डिस्टलरी, पेपर मिल और अल्कोहल पर आधारित रसायनिक इकाइयों की स्थापना शुरू कर दी है ताकि उनकी वित्तीय क्षमता में सुधार हो सके। चीनी मिलों के कार्यकलापों में विविधता लाने की दृष्टि से राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम भी उन्हें सहायता प्रदान कर रहा है। सहकारी चीनी मिलें अपने आस-पास की ग्रामीण जनता के लिए सामाजिक और आर्थिक सेवाएं जुटा रही हैं उनमें सिंचाई सुविधाएं, डेयरी और मुर्गीपालन कार्य, कृषि विस्तार एवं विकास कार्य तथा शिक्षा संस्थाओं और अस्पतालों की स्थापना करना शामिल है। सहकारी चीनी मिलें ग्रामीण जनता को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के लिए औद्योगीकरण में प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से उत्प्रेरक की भूमिका निभा रही हैं। चीनी विनिर्माण की मशीनरी की बढ़ती हुई लागत को सीमा के भीतर रखने के लिए सहकारी क्षेत्र में अधिकृत यूनिट लगाने के विचार से राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा राष्ट्रीय भारी इंजीनियरी सहकारी लिमिटेड का विकास किया गया है तथा उसमें वित्तीय सहायता प्रदान की है ताकि चीनी के निर्माण के काम आने वाली मशीनरी के बढ़ते हुए मूल्यों पर काबू रखा जा सके। यह यूनिट तेल परिसंस्करण डिस्टलरी आदि जैसे अन्य क्षेत्रों में भी विनिर्माण संबंधी अपने कार्यकलाप चला रही है।

सहकारी क्षेत्र में कताई मिलें, कपास उत्पादकों तथा उनके वास्तविक उपभोक्ताओं अर्थात् हथकरघा बुनकरों द्वारा लगाई जाती है। वर्ष 1987-88 के दौरान चार सहकारी कताई मिलें लगाई गईं तथा उन्होंने उत्पादन शुरू कर दिया है। 31.3.88 को स्थिति के अनुसार उत्पादनशील सहकारी कताई मिलों की संख्या बढ़कर 101 हो गई। इसके अलावा 13 और मिलें लगाई गई हैं। सहकारी क्षेत्र में लगाई गई कुल तकलियों की संख्या 26.83 लाख है जो कि देश में कताई मिलों में लगाई गई कुल तकलियों का करीब 20 प्रतिशत है।

कपास की उत्पादकता में सुधार लाने तथा साथ-ही-साथ कपास की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए एक नई कपास विकास योजना को राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा मंजूरी दी गई, जिसे चुनिंदा क्षेत्रों में क्रियान्वित किया जाना है। अखिल भारतीय सहकारी कताई मिल महासंघ (एफकोस्पिन) लि. सदस्य मिलों को विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्रदान करता रहा जिसमें परियोजना रिपोर्ट तैयार करना, प्लांट और मशीनरी का चयन तथा अपनी कपास और सूत परीक्षण प्रयोगशालाओं की सुविधाएं प्रदान करने सहित अन्य संवर्धनात्मक और तकनीकी सेवाएं शामिल हैं।

तिलहनों का विकास और परिसंस्करण एक और ऐसा क्षेत्र है जिसमें काफी विकास हुआ है। मार्च, 1988 के अंत तक 362 तेल मिलें और दूसरी इसी तरह की परिसंस्करण यूनिटें सहकारी क्षेत्र में संगठित की गई इनमें से 300 यूनिटें स्थापित की जा चुकी हैं।

तिलहन विकास को दी गई राष्ट्रीय प्राथमिकता के अनुरूप और किसानों की सहायता के लिए सहकारी समितियों की बढ़ती भूमिका के अनुसार किसानों को खेत और प्रोसेसिंग यूनिटों से अधिक उत्पादन प्राप्त होने के माध्यम से बेहतर आय मिलने के लिए सहकारी एकीकृत तिलहन कम्प्लैक्सों को बढ़ावा दिया जाता है। तिलहनों के उत्पादन कार्यक्रमों की योजना तैयार करने, आदानों की सप्लाई तथा उन्हें एकत्र करने, तिलहनों के परिसंस्करण और परिवहन एवं तेल और इसके उपोत्पादों के विपणन की व्यवस्था करने के लिए इसकी आवश्यकता है। किसानों को विस्तार सेवाएं मुहैया कराने, आदानों की डिलीवरी और प्रोसेसिंग यूनिटों के सदस्यों को तिलहनों के बीजों की सप्लाई करने के लिए तिलहन उत्पादक सहकारी समितियां अलग से संगठित की जा रही हैं।

कृषि सहकारी समितियों को कृषि उत्पादों के विपणन, कृषि आदानों की सप्लाई और उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण जैसे विभिन्न कार्यों के लिए गोदामों की आवश्यकता होती है। सातवीं योजना में सहकारी क्षेत्र में 20 लाख मीट्रिक टन अतिरिक्त भंडारण क्षमता सृजित करने पर जोर दिया गया है। देश की करीब 46,000 प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों और विभिन्न स्तरों की अधिकांश विपणन समितियों के पास अब अपने गोदाम हैं।

सहकारी समितियों द्वारा शीतागार तैयार किए जाने के लिए विशेषकर आलू के संबंध में राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा दिए गए प्रोत्साहन और सहायता के फलस्वरूप मार्च 1988 के अंत तक स्थापित किए गए सहकारी शीतागारों की संख्या 216 तथा उनकी क्षमता 5.85 लाख मीट्रिक टन तक पहुंच गई है।

सहकारी समितियां ऋण और उर्वरकों सहित अन्य आदानों के वितरण के जरिए कृषि के आधुनिकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। पिछले वर्ष के दौरान उर्वरक आसानी से उपलब्ध थे तथा सहकारी समितियों को भारी प्रतिस्पर्धा करनी पड़ी जिसे सहकारी समितियों ने लगभग 67000 खुदरा बिक्री केन्द्रों के जरिए 30 लाख मी. टन पौष्टिक तत्व वाले उर्वरक का वितरण किया।

सहकारिता विकास कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सहकारी कार्यकलापों की सुविधाएं अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों सहित कमजोर वर्गों को धीरे-धीरे बढ़कर मिलती रहें। इससे वर्तमान प्राथमिक कृषि ऋण समितियों में कमजोर वर्गों की सदस्यता बढ़ाकर और उनके लिए ऋण और सेवाओं की उत्तरोत्तर वृद्धि सुनिश्चित करने तथा डेयरी,मुर्गी पालन,मधुमक्खी पालन और मछली पालन जैसी गतिविधियों के लिए कार्यात्मक सहकारी समितियों की स्थापना करके उद्देश्य को पूरा किया जाए। आदिवासियों की सुविधाओं के वास्ते मुख्यतः आदिवासी क्षेत्रों में बड़े आकार की बहुउद्देशीय समितियां गठित की गई। 1987-88 के दौरान राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने कुल 13.50 करोड़ रुपये की सहायता की मंजूरी दी। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम द्वारा सहकारी समितियों के कमजोर वर्गों जैसे मत्स्य, हथकरघा, आदिवासी, डेरी, कापर एवं रेशम उत्पादन, कुक्कुट पालन, अनुसूचित जाति और पहाड़ी क्षेत्रों में सहकारी समितियों के लिए सहायता नियुक्त की गई थी।

देश में तीन स्तरीय सहकारी प्रशिक्षण संरचना है। राष्ट्रीय स्तर पर पुणे में बैकुंठ मेहता राष्ट्रीय सहकारी प्रबंध संस्थान है जो राज्यों के सहकारी विभागों तथा संस्थानों के वरिष्ठ/प्रमुख कार्मिकों की प्रशिक्षण की आवश्यकताओं को पूरा करता है। राज्य स्तर पर देश में 18 सहकारी प्रशिक्षण महाविद्यालय हैं जो प्रायः राज्यों के मुख्यालयों में स्थित हैं। ये महाविद्यालय राज्य सहकारी विभागों तथा संस्थाओं के सहकारी कार्मिकों के मध्यवर्ती स्तर की प्रशिक्षण की आवश्यकताओं को पूरा कर रहे हैं। 92 सहकारी प्रशिक्षण केन्द्र हैं जो प्रायः जिला स्तर पर स्थित हैं। ये केन्द्र सहकारी कार्मिकों की कनिष्ठ स्तर की श्रेणी को सहकारी प्रशिक्षण दे रहे हैं।

भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ ने विभिन्न सहकारी शिक्षा कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए समग्र मानिटरिंग/पर्यवेक्षण और समन्वयकारी एजेंसी और सदस्यों को जानकारी देने के लिए नेतृत्व करने और सहकारी समितियों के उत्तरदायी प्रबंध के रूप में कार्य करना जारी रखा। ये कार्यक्रम मुख्य रूप से सहकारी समितियों के सदस्यों, सक्षम सदस्यों और कार्यालय के पदाधिकारियों के लिए तैयार किए गए जिसे देश में 23 राज्य सहकारी संघों के 700 भ्रमणशील सहकारी शिक्षा प्रशिक्षकों द्वारा चलाया जाता है। तथापि, पाठ्यक्रम की विषय वस्तु, पद्धति तकनीकी और प्रशासनिक प्रबंध को इस तरह से तैयार किया जाता है कि वे विभिन्न राज्यों की स्थानीय आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त हो। इसके अलावा, सहकारी शिक्षा कार्यक्रम के तीव्रीकरण के लिए एक केन्द्रीय क्षेत्र की योजना असम, बिहार, हिमाचल प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर, मणिपुर, उड़ीसा, राजस्थान और पश्चिम बंगाल राज्यों में स्थित 14 परियोजनाओं के द्वारा सहकारी रूप से कम विकसित राज्यों में क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करने के लिए भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ द्वारा सीधे चलाई जा रही है। भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ सहकारी शिक्षा के लिए एक राष्ट्रीय केन्द्र भी चलाती है, जहां शिक्षा अनुदेशकों के लिए सहकारी शिक्षा में बुनियादी प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाने के साथ-साथ विभिन्न नेतृत्व विकास कार्यक्रम/कार्यशालाएं/उन्मुखी ओरिएन्टेशन कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं। भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ की अन्य महत्वपूर्ण गतिविधियों में सहकारी समितियों द्वारा गांवों को अपनाकर समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम चलाना, परिवार कल्याण कार्यक्रमों में सहकारी समितियों को शामिल करना, सहकारी समितियों के द्वारा पुनः बनाए गए 20 सूत्री कार्यक्रमों का कार्यान्वयन करना, प्रकाशन, प्रचार और लोक संबंध, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, अनुसंधान अध्ययन और सम्मेलनों/कार्यशालाओं/सेमिनारों आदि का आयोजन करना शामिल है।

भारत सरकार ने 'राष्ट्रीय सहकारी समितियों की संरचना और उनकी भूमिका' संबंधी एक समिति का अप्रैल, 1986 में गठन किया, जो उस क्षेत्र की आवश्यकताओं और कार्य निष्पादन तथा सहकारी आन्दोलन में दूसरे क्षेत्रों के साथ और सरकार के साथ भी आपसी आवश्यकताओं का मूल्यांकन करेगी और राष्ट्रीय संघ की सदस्यता और उनके बोर्डों के गठन की जांच करेगी।

सदस्यों को प्रचालन दक्षता और उत्कृष्ट सेवा प्राप्त कराने में सहकारी संगठन के विकास के लिए महत्वपूर्ण आदान के रूप में पर्याप्त प्रशिक्षित नई व्यावसायिक क्षमता वाले कार्मिकों का प्रावधान है। सहकारी समितियों में व्यावसायिक आधार पर आधुनिक प्रबंध की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए भारत सरकार ने एक समिति गठित की है, जो विभिन्न सहकारी समितियों के अधिनियमों की जांच करेगी और सहकारी संगठनों में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को तेज करने तथा व्यावसायिक प्रबंध को बढ़ावा देने के लिए विधायी कार्यवाही के वास्ते उचित मार्गदर्शी सिद्धान्त सुझाएगी। समिति अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर चुकी हैं, जिसकी राज्य सरकारों और अन्य संबंधित व्यक्तियों की सलाह से जांच की जा रही है।

98/9, एम. बी. रोड, साकेत,
नई दिल्ली-110017

ग्राम विकास एवम् आधुनिक तकनीक

हरे कृष्ण सिंह

एक समय था जब भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था। उस समय यहां बेरोजगारी नाम की कोई समस्या नहीं थी। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अपने चरमोत्कर्ष पर था। हमारी समृद्धि एवं संसाधनों को देखकर ही विदेशी यहां व्यापार के लिए आए और धीरे-धीरे शासक बन बैठे। इस परतंत्रता काल में भारतीय ग्रामीणों का जीवनाधार कृषि तथा ग्रामोद्योग व्यवस्था का स्तर समाप्त करने का हर सफल प्रयास किया गया। परिणामस्वरूप देश के ग्रामीणों एवं गांवों की आर्थिक व्यवस्था चरमरा गई जिसमें समाज का एक बड़ा भाग अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं यथा भोजन, वस्त्र तथा आवास को भी पूरा नहीं कर पा रहा था। भारतीय समाज को अशिक्षा, दरिद्रता, रोग, कलह, गन्दगी एवं विद्रोह ने ज्वर की भांति जकड़ा हुआ था। विदेशी शासकों से मुक्ति पाने के लिए हमें काफी संघर्ष करना पड़ा। अंततः सन् 1947 में स्वाधीनता प्राप्त हो गई।

स्वाधीनता की सुहानी सुबह के समय हमारे हाथों में तिरंगा लहरा रहा था लेकिन कृषक, दस्तकार, कारीगर एवं श्रमिक पंखविहिन चिड़ियों की तरह विकास की उड़ान भरने के लिए छटपटा रहे थे। मौसम की तुनकमिजाजी पर आश्रित कृषि एवं तत्कालीन लघु एवं कुटीर उद्योग 40 करोड़ आबादी का पेट नहीं भर पा रहे थे। गांवों की झोपड़ियों में जीवनयापन करने वाले नंगे, अधनंगे मानव भूख से मरने को विवश थे। इन समस्याओं ने तत्कालीन राजनीतिज्ञों एवं समाज सुधारकों का ध्यान ग्रामीणांचल के चातुर्दिक विकास के लिए आकृष्ट किया। ऐसे विकास के लिए हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने नियोजित मार्ग अपनाया।

नियोजित मार्ग का लाभ

अब तक सात पंचवर्षीय योजनाएं तथा चार वार्षिक योजनाएं समाप्त हो चुकी हैं। वस्तुतः हम आठवीं पंचवर्षीय योजना में प्रवेश कर गए हैं लेकिन राजनीतिक अस्थिरता के कारण यह योजना नहीं बन पाई है। इन योजनाओं में भारतवासियों के जीवन स्तर को उठाने के लिए वृहत उद्योगों की स्थापना, कृषि विकास, लघु, एवं कुटीर उद्योगों के विस्तार के साथ-साथ ग्रामवासियों के लिए अनेक ग्राम विकास कार्यक्रमों की शुरुआत की गई। इनमें प्रमुख हैं—सामुदायिक विकास कार्यक्रम, समेकित ग्रामीण विकास योजना, ग्रामीण युवकों के स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण योजना एवं जवाहर रोजगार योजना आदि। कृषि क्षेत्र में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् एवम् लघु-कुटीर उद्योगों के विकास-विस्तार के लिए खादी ग्रामोद्योग आयोग सतत् प्रयत्नशील रहा है। विज्ञान एवं तकनीक अनुसंधान के लिए भी अनेक सरकारी संस्थाएं कार्यरत हैं।

इस सामूहिक प्रयास ने कृषि, उद्योग, ऊर्जा के साथ-साथ आराम एवं विलासिता की वस्तुओं का उत्पादन बढ़ा दिया। आज हम अपने ग्रामीण कृषि के बलबूते पर 84 करोड़ आबादी के लिए खाद्यान्न उत्पन्न करने के साथ भावी प्राकृतिक आपदाओं से निपटने के लिए भी अन्न का भंडार संचित कर लिए हैं। विदेशी शासन काल में हमारी उत्पादन क्षमता क्षीण हो गई थी किन्तु आज दुनिया में भारत ही ऐसा देश है, जहां बाजार में मिलने वाली हर उपभोक्ता सामग्री स्वदेशी है। अब हम 150 वस्तुओं का निर्यात भी करते हैं। इसके अलावा परमाणु और अन्तरिक्ष विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी, इलैक्ट्रोनिक्स इत्यादि ऐसे क्षेत्र हैं, जिसमें उल्लेखनीय प्रगति हुई है। बड़े-बड़े उद्योगों के साथ लघु उद्योगों का भी विकास हुआ है।

वर्तमान स्थिति

हमारे यहां आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिक का सबसे ज्यादा इस्तेमाल रक्षात्मक एवं विलासिता कार्य में किया जा रहा है। फलतः आधुनिक विकास ने भारतीय बाजारों में कार, फ्रिज, टेलीविजन, टेलीफोन, कम्प्यूटर, कीमती वस्त्र, रेडियो, शक्तिचालित यातायात के साधनों का अम्बार लगा दिया है। कृषि कार्य में खेतों की जुताई से लेकर अन्न संग्रह तक आधुनिक यंत्रों के प्रयोग की योजना का श्रीगणेश कर दिया गया है। इस प्रकार विपुल उत्पादन एवं विकास की लालसा में हमने मशीन का अदना-सा पुर्जा बनाना स्वीकार कर लिया है। आज गांव की तेलधानी नगर की तेल मिलों में, गांव की दस्तकारी और कला-कृतियां,नगर के व्यवसायिक प्रतिष्ठानों में गांव के करघे नगर की कपड़ा मिलों में और गांव का गुड़ और खांडसारी उद्योग नगर स्थित चीनी मिलों में विलीन हो गए हैं। गांव का सारा कच्चा माल और संपदा शहर में लाने और शहरों का पक्का माल गांव में उड़ेल देने की नीति के कारण ग्रामीण समाज की स्थिति चरमरा-सी गई है।

हमारा ग्रामीण समाज मुख्यतः कृषि और कृषि पर आधारित पारम्परिक लघु एवं कुटीर उद्योगों पर टिका है लेकिन शहरों और महानगरों के आसपास के गांवों की स्थिति काफी अलग-थलग है। दिन प्रतिदिन बढ़ती आबादी तथा औद्योगिक विकास के कारण शहरों के आस-पास के ग्रामों की खेती योग्य जमीन हड़पी जा ही है और बड़ी-बड़ी इमारतें तथा उद्योग स्थापित किए जा रहे हैं। इसका परिणाम यह है कि पीढ़ी दर पीढ़ी अपने पुश्तैनी धन्धे में लगे कारीगर, बढ़ई, जुलाहे आदि दस्तकार आजीविका के लिए शहरों के मुखापेक्षी हो गए हैं।

जटिल प्रकृति की प्रौद्योगिकी, भारी यंत्रीकरण और वृहत उद्योगवाद के कारण देश का वातावरण, वायु, जल और भूमि प्रदूषित हो रहे हैं। आयातित विज्ञान एवं तकनीक काफी खर्चीला होने के साथ-साथ हमारे ग्रामीण परिवेश एवं ग्रामीण समाज के लिए अनुपयुक्त हो रहा है। जैसे--गांवों में फ्रिज का उपयोग शहरों की अपेक्षा आर्थिक अभाव, बिजली संकट, मरम्मत असुविधा जैसे अनेक समस्याओं के कारण एक खिलौना मात्र है। दूसरा उदाहरण—गांव के टेढ़े-मेढ़े एवं कच्चे रास्ते पर आयातित ईंधन के बल पर यातायात के लिए मोटर या जीप का प्रयोग कमजोर साबित हो रहा है।

वास्तव में हमारे ग्रामीण समाज की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक बनावट इतनी कमजोर है कि वह "बटन दबाया और सारा काम हो गया" वाली तकनीक को अपने में समावेशित नहीं कर पा रही है। विकास की दौड़ में विश्व में हमने अपना एक खास स्थान बना लिया है लेकिन ग्रामीण समस्याओं की परिधि में कृषि, पशुधन, ऋणग्रस्तता, सामाजिक समस्याएं अन्धविश्वास, छुआछूत, जाति-पाति तथा स्वास्थ्य एवं शिक्षा सम्बन्धी संक्रामक कीटाणुओं ने अपना घर बना लिया है। हमारे विचार में इन ग्राम्य समस्याओं का बुनियादी कारण गरीबी है। इस गरीबी को मिटाने के लिए ग्रामीण समाज में व्याप्त बेरोजगारी का अन्त करना होगा। इसके लिए "सबके लिए काम" की नीति को अपनाना होगा; जो करोड़ों की पूंजी लगाकर उद्योग खोलने से कदापि सम्भव नहीं है। इस विचार का पोषण महात्मा गांधी जी के वक्तव्य से भी स्पष्ट हो जाता है। उनका कहना था—"अगर 300 लाख लोगों के बजाय 30 हजार लोगों की मदद से हम अपने देश की जरूरत भर सामान का उत्पादन करें तो मुझे कुछ नहीं कहना है, लेकिन यह ध्यान रहे कि 300 लाख लोग बेकार न रहें।"

गांधी के विचारों को भुलाकर गांव से शहर तक कम्प्यूटर एवं मोटर का इस्तेमाल किया जा रहा है। जिससे बेरोजगारों की फौज तैयार हो रही है जो अपने दिशा-निर्देश से भटक गई है। साथ ही उपभोगवादी सभ्यता के मारे पर्यावरण और मानवीय मन दोनों असन्तुलित और विक्षिप्त हो रहे हैं।

अब आधुनिक अर्थशास्त्री भी मानने लगे हैं कि राष्ट्रीय योजनाओं का आधार "सबके लिए काम" होना चाहिए। जनरल मैक आर्थर ने गांधी जी की मृत्यु के बाद अपने संदेश में कहा था "दुनिया को किसी न किसी दिन गांधी जी की बात सुननी पड़ेगी। उसके बिना दूसरा कोई चारा है ही नहीं।" मैं दुनिया की बात तो नहीं करता लेकिन भारत के संदर्भ में यह बात निश्चित स्वीकार्य होनी चाहिए क्योंकि प्रदूषण रहित वातावरण, शोषण मुक्त समाज, सबके लिए काम की व्यवस्था विपुल मात्रा में उत्पादन से ही सम्भव है। इसके लिए भारत जैसे देश को अपने परिस्थिति के अनुरूप ही तकनीक खोजनी चाहिए।

उपयुक्त तकनीक

किसी भी राष्ट्र के लिए उपयुक्त तकनीक वही है जो देश की आर्थिक सामाजिक व भौगोलिक बनावट के अनुरूप हो तथा मानवीय पूंजी व मशीन के बीच सम्पर्क सूत्र का कार्य करें। इस दृष्टि से हमारे देश में "श्रम सघन तकनीक" उपयुक्त होगी। "श्रम सघन तकनीक" का उपयोग खासकर जनाधिक्य एवं अर्थाभाव की दशा में की जाती है और ये दोनों हमारे राष्ट्र की विशेषता है।

इस तकनीक के तहत गांधी जी के चरखा में सुधार की आवश्यकता महसूस होती है जिससे अधिक से अधिक लोगों को रोजगार मिलेगा और बेकार के समय का सदुपयोग होगा। इसके अलावा ग्रामीण समाज पर कम से कम आर्थिक बोझ पड़ेगा तथा प्रदूषण विहीन वातावरण कायम रह सकेगा। गांव का कच्चा माल, श्रम, पूंजी का उपयोग गांव में ही होगा और धीरे-धीरे गांव का शहरीकरण यानी भारत का हर गांव शहर बनेगा। इसी प्रकार ग्राम्य जीवन में फ्रिज के बदले शीतल घड़ा तथा मोटर या जीप के बदले अपने पौराणिक यान बैलगाड़ी का प्रयोग शुरू करना है। इसके लाभ हैं—कम लागत, ऊर्जा संकट से मुक्ति, सरल उपयोग, मानव का मशीनीकरण नहीं, प्रदूषण रहित वातावरण के साथ-साथ गांव के गरीब को पूर्ण रोजगार की प्राप्ति। एक साथ इतना लाभ का अर्थ है—"छोटा ही सुन्दर होता है।" इन संकेतों से यह तथ्य साफ हो जाता है कि ग्रामीण समाज का कल्याण करने में "श्रम सघन तकनीक" एक सशक्त माध्यम बनेगा।

मब्बारपुर, दरभंगा-846004
(बिहार)

पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोत एवम् ग्रामीण अर्थव्यवस्था

डा. राम अवतार शर्मा

ऊर्जा आर्थिक विकास का आधारभूत साधन है और जब तक नियमित तथा पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा की पूर्ति नहीं होती है तब तक आर्थिक विकास से सम्बन्धित लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट हो चुका है कि प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत और प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पादन में सीधा सम्बन्ध है। वस्तुतः ऊर्जा की मांग में वृद्धि और आर्थिक प्रगति दोनों साथ-साथ चलती हैं। इसीलिए विकसित और विकासशील देशों में ऊर्जा की खपत में भारी अन्तर बना हुआ है। विकासशील देशों में सम्पूर्ण विश्व की 70 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है परन्तु कुल ऊर्जा उपयोग में उनकी भागीदारी केवल 17 प्रतिशत है। ऊर्जा की अपर्याप्त पूर्ति से आर्थिक उन्नति में बाधा पड़ती है और कृषि तथा उद्योग दोनों क्षेत्रों के क्रियाकलापों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में ऊर्जा क्षेत्र का काफी विस्तार हुआ है फिर भी ऊर्जा की मांग और पूर्ति में अन्तर आज भी विद्यमान है। विभिन्न स्रोतों से भारत में ऊर्जा की अधिष्ठापित क्षमताओं जो कि 1950 में 1700 मेगावाट थी अब तक बढ़कर लगभग 6400 मेगावाट हो गई है। फिर भी देश के विभिन्न क्षेत्रों में ऊर्जा संकट बना हुआ है। इसका मुख्य कारण विकास के साथ ऊर्जा की मांग में ऊर्जा के उत्पादन से अधिक वृद्धि होना है। अन्य देशों की भांति भारत में भी अनेक स्रोतों से ऊर्जा प्राप्त की जाती रही है। सुविधा की दृष्टि से इन स्रोतों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम ऊर्जा के परम्परागत या वाणिज्यिक स्रोत जिनमें कोयला, खनिज तेल, जल, प्राकृतिक गैस और परमाणु आदि प्रमुख हैं, का प्रयोग बड़े पैमाने पर हो रहा है। इन सभी स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग विभिन्न औद्योगिक कृषि, परिवहन, रक्षा तथा घरेलू आवश्यकताओं के लिए बड़े पैमाने पर किया जाता रहा है। इन सभी परम्परागत ऊर्जा स्रोतों की पूर्ति किसी भी देश में सीमित ही होती है और इन्हें पुनः उत्पादित नहीं किया जा सकता है। द्वितीय वर्ग में ऊर्जा के पुनः प्रयोज्य स्रोत आते हैं जिन्हें ऊर्जा के वैकल्पिक या गैर परम्परागत या गैर वाणिज्यिक स्रोत कहते हैं जो कि कभी समाप्त नहीं होते हैं। इनकी प्राप्ति और प्रयोग में सदैव निरन्तरता बनी रहती है। इनमें मुख्य रूप से बायो ऊर्जा, वायु ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, शहरी अपशिष्ट ऊर्जा और ऊर्जा संरक्षण आदि आते हैं। इन गैर परम्परागत अथवा पुनः प्रयोज्य ऊर्जा के स्रोतों के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य वर्तमान ऊर्जा संकट के समाधान के परिप्रेक्ष्य में परम्परागत ऊर्जा स्रोतों पर निर्भरता कम करने, परम्परागत स्रोतों में भारी विनियोग सम्बन्धी कठिनाइयों से बचने, सस्ते और गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों का विकास करके ऊर्जा की मांग व पूर्ति में सन्तुलन लाने हेतु सुझाव देना है।

ऊर्जा के पुनः प्रयोज्य स्रोत निजी औद्योगिक इकाइयों, कृषि कार्यों एवं घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिक उपयोगी एवम् कम खर्चीले ऊर्जा स्रोत हैं। इनमें प्रयोग किए जाने वाले आदाय लागत रहित होते हैं और विनियोग सम्बन्धी आवश्यकताएं भी बहुत कम हैं। इन स्रोतों से नियमित रूप से स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप ऊर्जा प्राप्त होती है परन्तु ऊर्जा का विपणन नहीं होता है। इसलिए इसे गैर वाणिज्यिक ऊर्जा भी कहते हैं। गैर वाणिज्यिक ऊर्जा के प्रचलित प्रमुख स्रोतों का संक्षिप्त विश्लेषण निम्नलिखित है।

ईंधन ऊर्जा

ईंधन लकड़ी या जलाऊ लकड़ी का विश्व में ऊर्जा के उत्पादन में खनिज तेल, कोयला और प्राकृतिक गैस के बाद चौथा स्थान है। ईंधन लकड़ी वनों से प्राप्त ऊर्जा का उपादान है। भारत में जनसंख्या वृद्धि के साथ ईंधन लकड़ी की मांग में वृद्धि हो रही है तथा जलाऊ लकड़ी के उत्पादन में वृद्धि की दर से मांग में वृद्धि की दर अधिक है। मांग में अधिक वृद्धि के कारणों में वैकल्पिक ईंधन के साधनों जैसे कच्चा कोयला, मिट्टी का तेल तथा विद्युत आदि की नगरीय और विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में अपर्याप्त पूर्ति आदि हैं। भारतीय योजना आयोग की ईंधन लकड़ी अध्ययन समिति 1982 के अनुमानों के अनुसार देश के ग्रामीण क्षेत्र में प्रायोजित ऊर्जा का 80.2 प्रतिशत गैर वाणिज्यिक स्रोतों से प्राप्त किया जाता है। जिसमें से 68.5 प्रतिशत भाग अकेले ईंधन लकड़ी से प्राप्त होता है और नगरीय क्षेत्र में कुल प्रायोजित ऊर्जा का 51.5 प्रतिशत भाग गैर वाणिज्यिक स्रोतों से पूरा किया जाता है जिसमें लगभग 45.5 प्रतिशत योगदान केवल ईंधन लकड़ी का है।

बायो ऊर्जा

ग्रामवासियों के लिए दिन प्रतिदिन दूभर होता जा रहा कोयला, मिट्टी का तेल, बिजली और ईंधन की लकड़ी की

आपूर्ति की दशा में बायो ऊर्जा का अधिकतम उत्पादन एवम् उपयोग ही मात्र ऊर्जा संकट का समाधान है। बायो ऊर्जा का अभिप्राय जैविक प्राणियों से बायोमास के सीधे उपयोग द्वारा या इसे गैस और तरल रूप में परिवर्तित करके ऊर्जा प्राप्त करने से है। बायोमास के उत्पादन के तीन प्रमुख रूप हैं। (क) पशुओं का गोबर तथा मनुष्यों का मैला, (ख) कृषि निक्षेप तथा कूड़ा-कचरा और (ग) विशिष्ट पौधे जैसे—गन्ना, मक्का, गेहूं तथा सूरजमुखी आदि बायोमास के उत्पादन में बहुत उपयोगी हैं। ये सभी स्रोत अनन्त काल तक प्रायोजित हो सकते हैं। बायो ऊर्जा प्राप्त करने के बाद अवशेष को उत्तम खाद के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। वनस्पति अथवा जैव स्रोतों से प्राप्त बायो मास को कीटाणुओं द्वारा सड़न पैदा करके मीथेन गैस में परिवर्तित किया जाता है। इस गैस को रोशनी करने, खाना बनाने, जमीन से पानी निकालने तथा चारा काटने की मशीन चलाने आदि में प्रयोग किया जा सकता है। भारत सरकार ने बायो ऊर्जा के महत्व को देखते हुए छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में लगभग 4 लाख व्यक्तिगत बायो गैस संयंत्र स्थापित करने का कार्यक्रम बनाया था परन्तु इन संयंत्रों के लिए उपयुक्त स्थान, पूंजी, खेतिहर श्रमिकों व सीमान्त कृषकों पर पशुओं की कमी आदि के कारण इस कार्यक्रम को केवल आंशिक सफलता ही मिल पाई और सरकार ने निजी संयंत्रों के स्थान पर सामुदायिक संयंत्र लगाने का कार्यक्रम बनाया है। राष्ट्रीय बायो गैस कार्यक्रम में अग्रलिखित उद्देश्यों को सम्मिलित किया गया है।

1 स्वच्छ एवम् प्रदूषण मुक्त ऊर्जा प्रदान करना।

2 कृषि के लिए अधिक शक्तिशाली खाद की पूर्ति व रासायनिक खादों के दोषों को दूर करने हेतु अधिक उपयोगी कम्पोस्ट खाद की पूर्ति करना।

3 गोबर और लकड़ी को जलाने से रोकना ताकि गोबर को अधिक उपजाऊ खाद के रूप में प्रयोग किया जा सके तथा भूमि को वन रहित होने से बचाया जा सके।

4 धुआं रहित खाना पकाने के साधन उपलब्ध कराकर ग्रामीण क्षेत्रों में नीरसता और महिलाओं के स्वास्थ्य में सुधार करना।

5 ग्रामीण स्टेशनों में सुधार लाना आदि

सौर ऊर्जा

सूर्य समस्त प्रकार की क्रियाओं के सम्पन्न करने में ऊर्जा का एकमात्र स्रोत है। पशु अपना भोजन पौधों से प्राप्त करते हैं और पौधे अपना भोजन सूर्य से प्रकाश संश्लेषण विधि द्वारा प्राप्त करते हैं। प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में सौर ऊर्जा एकत्रित होती है जिसकी सहायता से पौधे और पशु अपनी क्रियाओं को सम्पन्न करते हैं। एक व्यापक रासायनिक प्रक्रिया के परिणामस्वरूप ऊर्जा की भारी मात्रा जो सूर्य द्वारा किरणों के माध्यम से निर्गत की जाती है उसे सौर ऊर्जा कहते हैं। इस रासायनिक क्रिया को थर्मो न्यूक्लीयर फ्यूजन कहते हैं। सौर ऊर्जा को सौर नियतांक के रूप में निरुपित किया जाता है। सौर नियतांक का मान 1.353 किलोवाट प्रति मीटर है।

भारत में सौर ऊर्जा का उपयोग मुख्य रूप से पानी से नमक अलग करने में किया जाता रहा है परन्तु इसे खाना बनाने, पानी गरम करने, फसल सुखाने व ठण्डा रखने आदि के लिए भी उपयोगी पाया गया है। सौर ऊर्जा का उपयोग दो प्रकार से किया जा सकता है। एक तो सौर फोटो वाल्टिक शक्ति के रूप में सूर्य की किरणों को परोक्ष रूप में विद्युत पैदा करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इस ऊर्जा से रेडियो, टेलीविजन चलाने तथा बैटरी को आवेशित करने का काम किया जा सकता है। इस ऊर्जा में सूर्य की किरणों को विद्युत में परिवर्तित करने के लिए थर्मो आयोनिक और थर्मो विद्युत परिवर्तकों का प्रयोग किया जाता है। दूसरे सौर ऊर्जा को थर्मल तकनीक पद्धति के द्वारा विद्युत में परिवर्तित किया जाता है। इसके लिए सूर्य का उपयोग तापक्रम बढ़ाने के लिए किया जाता है। सोलर कुकर से खाना पकाना, सोलर ड्राइंग से खाद्यान्न, सब्जियां व लकड़ी आदि सुखाना आदि इसके उपयोगी प्रयोग हैं। सौर ऊर्जा सर्व श्रेष्ठ, सस्ती एवम् पूरी तरह से प्रदूषण रहित है।

वायु ऊर्जा

विभिन्न क्षेत्रों में दाब के अन्तरों के कारण हवा का चलन होता है। इन हवाओं में एक विशेष प्रकार की ऊर्जा प्रवाहित होती है जिसे पवन ऊर्जा या वायु ऊर्जा कहते हैं। जिस क्षेत्र में वर्ष भर प्रतिदिन और पर्याप्त समय तक तेज हवाएं बहती हैं उस क्षेत्र में पवन ऊर्जा के अनेकों उद्देश्यों के लिए लाभदायक उपयोग किए जा सकते हैं। यदि वायु कणों का घनत्व 'घ' और वायु का वेग 'व' है तो प्रति इकाई वायु आयतन की गतिज ऊर्जा घ $व^2$ और क्षेत्रफल अ के लिए ऊर्जा का मान घ $व^2$ अ हवा की दिशा में प्रति इकाई दूरी होगा। लेकिन इस समस्त ऊर्जा का निष्कर्ष_ सम्भव नहीं है क्योंकि ऐसा करने से वायु प्रवाह की गति शून्य हो जाएगी। अतः आधुनिक वायु मिलों में 30 प्रतिशत ऊर्जा ग्रहण क्षमता होती है जो कि 10 मीटर प्रति सेकिण्ड की गति की वायु से 3 किलोवाट/$मीटर^2$ विद्युत प्राप्त कर सकती है।

भारत में पवन ऊर्जा का उपयोग जमीन से पानी निकालने और विन्डमिल आदि के लिए बहुत उपयोगी रहा है। वर्तमान

समय में इस ऊर्जा के उपयोग के लिए दैनिक आवश्यकताओं में विशाल क्षेत्र है। देश में जिन विन्ड मिलों का निर्माण किया गया है उनमें वायु की न्यूनतम गति 7 कि. मी. प्रतिघन्टा, जमीन से अधिकतम 55 मी. गहराई तक पानी खींचने की क्षमता 400 से 500 लीटर प्रति घन्टा पानी निष्कासन, समुचित जल स्रोत से पानी खींचने आदि का ध्यान रखा गया है।

भूतापीय ऊर्जा

भूतापीय ऊर्जा का तात्पर्य भूमि के अन्तर तल में विद्यमान ताप ऊर्जा से है। धरातल के भीतर की इस गर्मी का आसानी से ऊर्जा के रूप में उपयोग किया जा सकता है। भारत में भूतापीय क्षमता सीमित है। देश में जो प्रभाग गर्म तापीय हैं उनमें उत्तर-दक्षिण भाग में हिमालय विस्तार में लद्दाख व मनीकरन के अतिरिक्त नर्मदा, सोन घाटी, दामोदर घाटी और पश्चिमी तट आदि प्रमुख हैं।

ऊर्जा संरक्षण

ऊर्जा आधुनिक युग एवं सभ्यता का पथ है और ऊर्जा के बिना हम जीवित नहीं रह सकते हैं। हम सब खाना बनाने, घरों में रोशनी करने, जमीन से पानी निकालने, खेतों में ट्रेक्टर चलाने, औद्योगिक उत्पादन करने व प्रत्येक प्रकार की परिवहन सुविधाओं तक में ऊर्जा का उपयोग करते हैं। इसलिए समय की यही पुकार है कि ऊर्जा उपयोग में निपुणता लाई जाए और किसी भी रूप में ऊर्जा की बर्बादी को समाप्त करके दुरुपयोगों पर अंकुश लगाया जाए। वर्तमान समय में देश में ऊर्जा विकास पर जितना ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है ठीक उतना ही ऊर्जा संरक्षणता पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। ऊर्जा साधनों का मितव्ययता से प्रयोग और विद्युत उपयोग में बचत का परिणाम ऊर्जा पूर्ति में वृद्धि के रूप में होता है। संक्षेप में ऊर्जा संरक्षण के अन्तर्गत (क) परिष्कृत रखरखाव और क्रिया आयाम (ख) वर्तमान उपकरणों में सूक्ष्म आधुनिकीकरण (ग) पूंजी विनियोगों में वांछित बड़े परिवर्तन और नियंत्रण (घ) कम ऊर्जा उपयोग की तकनीकों का आविष्कार तथा अंगीकरण (ड़) ऊर्जा स्रोतों की बचत और (च) ऊर्जा उत्पादन हेतु नए अनुसंधान आदि आते हैं।

अन्य स्रोत

उपरोक्त स्रोतों के अतिरिक्त सागर ऊर्जा, टाइडल ऊर्जा, शहरी अवशिष्ट ऊर्जा तथा लघु पन बिजली आदि को भी पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों के रूप में उपयोग किया जा सकता है। परन्तु भारत में इनका प्रयोग अधिक लोकप्रिय नहीं हो पाया है।

पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों के विकास में बाधाएं

पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोत अल्पकाल और दीर्घकाल दोनों ही दृष्टिकोणों से बहुत उपयोगी हैं परन्तु अभी तक न तो इन्हें समुचित लोकप्रियता ही मिली है और न ही इनका समुचित विकास ही हो पाया है। इनके विकास में निम्नलिखित प्रमुख बाधाएं हैं—

1 पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों के विकास और व्यापक उपयोग में सबसे बड़ी बाधा वित्त की है। हमारे देश में जहां निर्धनता का साम्राज्य है और व्यक्तिगत आय बहुत कम है वहां गैर परम्परागत ऊर्जा प्रणालियों के सम्भावित प्रयोक्ताओं के लिए यह सबसे बड़ी बाधा है।

2 प्रौद्योगिकीय विकास की दृष्टि से भी भारत बहुत पिछड़ा है। तकनीकी पिछड़ापन पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों के उपयोग में एक अवरोध है।

3 स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के उपयोग में तेजी से वृद्धि होने के कारण इनके निर्माण वितरण और संरक्षण के लिए एक विशाल संरचना का निर्माण किया गया है जबकि गैर वाणिज्यिक ऊर्जा के सम्बन्ध में कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया है।

4 अधिकांश उद्योग पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करने तथा ऊर्जा संरक्षण के प्रति उदासीन हैं।

5 गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के व्यापक प्रयोग में कुछ आदतें एवं सांस्कृतिक बाधाएं भी सामने आती हैं। इनमें समय, सीमा, पद्धति, अशिक्षा एवम् पारस्परिक सहयोग की भावना का अभाव आदि प्रमुख हैं।

6 वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों के सम्बन्ध में एक ठोस ऊर्जा नीति का न होना भी इनके अल्प विकास एवम् अलोकप्रिय होने का एक गम्भीर कारण है।

सुझाव

यद्यपि वर्तमान ऊर्जा संकट के समाधान के लिए भारत सरकार, ऊर्जा के वाणिज्यिक और पुनः प्रयोज्य स्रोतों से सम्बन्धित अनुसंधान, विकास, प्रदर्शन और उपयोग से सम्बन्धित व्यापक कार्यक्रम क्रियान्वित कर रही हैं फिर भी दिन प्रति दिन ऊर्जा संकट और भी गम्भीर होता चला जा रहा है। इसके प्रमुख कारणों में भारत में बड़े पैमाने पर किया गया औद्योगीकरण, ऊर्जा उत्पादन के सम्बन्ध में पहली तीन पंचवर्षीय योजनाओं में विशेष ध्यान न देना, खाड़ी संकट एवम् आर्थिक विकास आदि प्रमुख हैं। वर्तमान ऊर्जा के संकट के

समाधान, ऊर्जा स्रोतों के दीर्घकालीन विकास, मितव्ययतापूर्ण व नियमित उपयोगों हेतु निम्न सुझाव दिए जा सकते हैं—

1 सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि ऊर्जा के उपयोग में मितव्ययता बरती जानी चाहिए क्योंकि किसी भी स्रोत से प्राप्त ऊर्जा की प्रत्येक बचत ऊर्जा के दोगुने उत्पादन के समान होती है। इसके लिए सरकारी एवम् गैर सरकारी सभी क्षेत्रों में विद्युत राशनिंग, विद्युत कटौती एवम् विद्युत उपयोग निषेध सहित अन्य सभी ऐसे कारगर उपाय जो कि अर्थव्यवस्था पर कोई प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऊर्जा की मांग में कमी करते हों, को प्रभावपूर्ण ढंग से लागू किया जाना चाहिए।

2 पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों के विकास के लिए वित्तीय एवम् पूंजीगत समस्याओं के समाधान हेतु पर्याप्त अनुदान आर्थिक सहायता एवम् कम ब्याज दर से ऋण सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिए।

3 ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी देने तथा प्रशिक्षण आदि की समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए। यह व्यवस्था विकास खण्ड अधिकारी, ग्राम पंचायत एवम् अन्य स्थानीय सत्ताओं की देखरेख में अधिक उपयोगी हो सकती है। इसके साथ-साथ बेकार पड़ी भूमि पर वृक्षारोपण किया जाना चाहिए।

4 गोबर को जलाने से बचाकर ऊर्जा प्राप्त करने व अधिक शक्तिशाली खाद के रूप में प्रयोग करने के उद्देश्य से गोबर गैस व आधुनिक उन्नत चूल्हों के उपयोग को बढ़ाया जाना चाहिए।

5 ऊर्जा के पुनः प्रयोज्य स्रोतों के क्षेत्र में अनुसंधान एवम् विकास कार्यक्रमों को तेज किया जाना चाहिए तथा सौर ऊर्जा के सम्बन्ध में एक व्यापक कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए।

6 डीजल और मिट्टी के तेल के स्थान पर प्राकृतिक गैस का वैकल्पिक स्रोत के रूप में उपयोग बढ़ाकर खनिज तेल की मांग में कमी की जा सकती है।

7 ऊर्जा विकास कार्यक्रमों की सफलता के लिए व्यापक जन समर्थन, सहयोग, उत्साह व त्याग की आवश्यकता है। इसे मात्र सरकार का उत्तरदायित्व ही नहीं समझा जाना चाहिए वरन् इस दिशा में बड़े कृषक, उद्योगपति, व्यापारी, उपभोक्ता और समाज सेवी संगठन आदि सभी की महत्वपूर्ण भूमिका है। अतः सबको मिलकर धनात्मक प्रयास करने चाहिए।

8 ऊर्जा संरक्षण की सभी विधियों का व्यापक प्रचार किया जाना चाहिए तथा विभिन्न उद्योगों को पुनः प्रयोज्य ऊर्जा स्रोतों के उपयोग से अपनी ऊर्जा सम्बन्धी मांग को पूरा करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

9 चीनी उद्योग से बचे गन्ने के छिलके का कागज उद्योग में अधिक उपयोग ऊर्जा में बचत कर सकता है तथा सीरे से निर्मित एल्कोहल का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जा सकता है।

10 विद्युत शक्ति की बर्बादी व वितरण प्रणाली में होने वाले क्षरण को रोकना चाहिए और ताप बिजली घरों एवम् रासायनिक उर्वरक उद्योगों की भांति देश में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध प्राकृतिक गैस का उपयोग परिवहन साधनों एवम् रक्षा उद्योगों में करने हेतु परिष्कृत इंजन, यंत्र एवम् उपकरणों का निर्माण किया जाना चाहिए। पंचवर्षीय योजनाओं में ऊर्जा उत्पादन को सर्वोच्च प्राथमिकता देकर अधिक से अधिक वित्तीय साधनों का आवंटन किया जाना चाहिए।

15/7, सुभाष नगर, हल्द्वानी
जिला-नैनीताल (उ. प्र.)
पिन-264141

भारतीय ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं एवं स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

अमरकान्त पाण्डेय
नीलम गुप्ता

भारतीय अर्थव्यवस्था की मौलिक समस्या उसका तीव्र गति से आर्थिक विकास करने की है। आर्थिक विकास से आशय सभी लोगों को उनकी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए साधन उपलब्ध करवाना है। भारत में आर्थिक विकास का आधार ग्रामीण क्षेत्र के विकास पर आश्रित है। इसी क्षेत्र में उन सभी परिस्थितियों का निर्माण करना होता है जो पूरी अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाने में सहायक होती हैं।

ग्रामीण विकास से अभिप्राय है—"ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले अनेकानेक न्यून आय वर्ग के लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना और उनके विकास क्रम को आत्मपोषित बनाना।" यह एक ऐसी व्यूह रचना है जो लोगों के एक विशिष्ट समूह—निर्धन ग्रामीण के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को उन्नत बनाने के लिए बनाई गई है। इस तरह ग्रामीण विकास एक त्रिआयामी कार्यक्रम है—

1. यह एक विधि है जिसके द्वारा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में लोगों को शामिल किया जाता है।
2. यह एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा परम्परागत ग्रामीण संस्कृति को विज्ञान एवं तकनीकी के प्रयोग द्वारा आधुनिक बनाया जाता है।
3. यह एक उद्देश्य है जिसके द्वारा जीवन की गुणवत्ता में सुधार किए जाते हैं।

भारत की सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था का मुख्य आधार लगभग 6 लाख ग्रामों में रहने वाले वे लोग हैं जो देश की कुल जनसंख्या के लगभग 76 प्रतिशत हैं और जिनमें 66 प्रतिशत लोगों का प्रमुख व्यवसाय कृषि ही है लेकिन इनमें भी एक बड़ा भाग ऐसा है जो भूमिहीन है। जहां तक कृषि की बात है वह अभी भी मानसून पर ही निर्भर करती है। साथ ही कृषि जोत इतनी अस्वाभाविक है कि उन पर खेती करना मात्र श्रम और पूंजी का अपव्यय है क्योंकि हमारे देश में 73 प्रतिशत कृषि जोतें सीमान्त व लघु श्रेणी के अन्तर्गत आती हैं जिनमें कुल कृषि क्षेत्र का 23 प्रतिशत भाग ही आता है। ऐसी परिस्थितियों में यदि देश में गरीबी रेखा से नीचे जीने वालों की संख्या अधिक हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

ग्राम्य विकास के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही बहुत-सी योजनाएं आरम्भ की गई हैं, लेकिन किसी न किसी कारणवश वे पूर्ण विकास करने में समर्थ नहीं हो सकी हैं। ऐसी परिस्थिति में ग्रामीण विकास के लिए सहकारी संस्थाओं व स्वैच्छिक संगठनों की भूमिकाएं एक अहम् स्थान रखती हैं। सहकारी संस्थाओं का विकास व ग्रामीण विकास में उनकी भूमिका ग्रामीण समाज की विषमताओं को दूर करने के उद्देश्य से देश में सहकारी संस्थाओं की स्थापना की गई।

सर्वप्रथम फैमिन आयोग ने सन् 1881 एवं 1901 में संस्थागत वित्त संस्थाएं स्थापित करने का सुझाव दिया। परिणामस्वरूप 1904 में एक सहकारी साख समिति अधिनियम बनाया गया। इस अधिनियम के प्रभावी होने के बाद कार्य संचालन के फलस्वरूप कुछ विशिष्ट कमियां दृष्टिगोचर हुई जिनको दूर करने के लिए सन् 1912 में एक और अधिनियम पारित किया गया जिसके अन्तर्गत केन्द्रीय सहकारी बैंक की स्थापना हुई। इसी दौरान सहकारी समितियों का तीव्र गति से विकास हुआ। सहकारिता आन्दोलन के मूल्यांकन के लिए सन् 1915 में सर एडवर्ड मेगलेगन की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्ति की गई। इस समिति ने राज्य सहकारी बैंकों की स्थापना का सुझाव सन् 1915 में दिया और यह अनुभव किया गया कि सहकारी नीतियों और केन्द्रीय बैंकों के कार्यकलापों को समन्वित करने के लिए एक शीर्ष बैंक की स्थापना करना आवश्यक है। जिस प्रकार केन्द्रीय सहकारी बैंक प्राथमिक सहकारी समितियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, उसी प्रकार केन्द्रीय सहकारी बैंकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए राज्य स्तर पर एक राज्य सहकारी बैंक हो जो सहकारी

समितियों को नेतृत्व प्रदान करें। इसी प्रकार कृषकों की दीर्घ कालीन कृषि साख को पूरा करने के लिए सहकारिता अधिनियम के तहत भूमि विकास बैंकों की स्थापना सन् 1920 में हुई।

वर्तमान में सहकारिता आंदोलन देश के 98 प्रतिशत ग्रामों में चलाया जा रहा है तथा इसके द्वारा कुल ग्रामीण जनसंख्या के 50 प्रतिशत भाग को सहायता प्रदान की जा रही है। समय के साथ यह आंदोलन अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में भी विस्तृत होता जा रहा है। वर्तमान में सहकारी संस्थाएं ही साख की पूर्ति, विपणन व कृषि आदानों की पूर्ति के लिए प्रमुख संस्थागत अभिकरण के रूप में सामने आई हैं। 30 जून 1988 तक देश में 90 हजार प्राथमिक सहकारी समितियां, 354 केन्द्रीय सहकारी बैंक, 29 राज्य सहकारी बैंक, 19 केन्द्रीय भूमि विकास बैंक व 1,325 प्राथमिक भूमि विकास बैंक कार्य कर रही थीं।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के प्रारंभिक काल में सहकारी संस्थाओं का योगदान काफी कम था। अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण रिपोर्ट (गोरे वाला समिति) 1951-54 ने यह विचार व्यक्त किया कि सहकारी साख संस्थाएं कृषि साख में 3.1 प्रतिशत का ही योगदान कर पा रही हैं किन्तु समय के साथ-साथ इन संस्थाओं का योगदान बढ़ रहा है। सहकारी संस्थाओं का योगदान प्रथम पंचवर्षीय योजना के बाद से संतोषजनक रूप से बढ़ा है। वर्ष 1961-62 में इन संस्थाओं द्वारा दिए गए ऋण कुल प्रदत्त ऋणों के 15.6 प्रतिशत के लगभग थे। वर्ष 1985-86 में सहकारी संस्थाओं द्वारा 3684 करोड़ रुपये की साख कृषि क्षेत्र को प्रदान की गई (कुल प्रदत्त साख का 54.22 प्रतिशत)। वर्ष 1989-90 में इन संस्थाओं द्वारा दी गई साख बढ़कर 5789 करोड़ रुपये हो गई (कुल प्रदत्त साख का 43.47 प्रतिशत)। इस प्रकार यद्यपि पिछले पांच वर्षों की अवधि के दौरान सहकारी संस्थाओं द्वारा दी गई साख में कुल साख के प्रतिशत के रूप में कमी आई है, किन्तु इसके बाद भी यह कहा जा सकता है कि इन संस्थाओं द्वारा पहले की अपेक्षा अधिक मात्रा में कृषि क्षेत्र को साख की पूर्ति की जा रही है। अतः ग्रामीण विकास में इन संस्थाओं द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया जा रहा है।

ग्रामीण विकास में स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

स्वैच्छिक संगठन का अर्थ है ग्रामवासियों का ऐसा संगठन जिसमें वे मिलजुलकर खुद अपनी तरक्की के लिए प्रयास करें। इनके द्वारा गरीबी, दुख एवं अज्ञान के अन्धकार को दूर किया जा सकता है तथा ग्रामों के समग्र विकास के सक्षम भूमिका अदा की जा सकती है। समाजवादी समाज की स्थापना करने के उद्देश्य से सरकार ने पिछले 44 वर्षों में देश के ग्रामीण क्षेत्रों का विकास करने के उद्देश्य से अनेकानेक बृहद कार्यक्रमों को प्रारंभ किया है। शैक्षिक संस्थाओं जो कि इस स्वेच्छा से प्रेरित होती हैं कि ग्रामीण क्षेत्र में यदि असमानताओं को दूर न किया जा सके तो कम अवश्य किया जा सकता है, ने ग्रामीण जनता में व्याप्त गरीबी और दुखों को कम करने में बहुत बड़ा योगदान किया है। बदले में सरकार द्वारा इन संगठनों को विकास कार्य में सहयोग प्रदान किया जाता है। विकास के अनेकों सरकारी कार्यक्रमों का गहन परीक्षण किया जाए जो स्वैच्छिक संगठनों के प्रयोगात्मक कार्यक्रमों पर आधारित हैं। गुड़गांव, इटावा, वर्धा इत्यादि में चलाए गए ग्रामीण विकास के प्रयोग इनके उदाहरण हैं। इस प्रकार से स्वैच्छिक संगठन ग्रामीण विकास के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट भूमिका निभा रहे हैं।

स्वैच्छिक संगठनों द्वारा ग्रामों के स्वरूप को बदलने में जो भूमिका निभाई जा रही है उसे मोटे तौर पर तीन प्रकारों में बांटा जा सकता है— प्रथम प्रकार में कुछ विशेष कार्यक्रम जैसे कताई, बुनाई, दूध उद्योग, गृह निर्माण आदि कार्यक्रम जिन्हें ये संगठन आवश्यक व उपयोगी समझते हैं, सम्मिलित किए जा सकते हैं और इन कार्यक्रमों को ये संस्थाएं ग्रामीणों के एक समूह (Package) के रूप में प्रदान करते हैं। ऐसे प्रकरणों में बेरोजगार लोगों को रोजगार प्राप्त करने में इन संगठनों द्वारा सहायता करने का प्रयास किया जाता है। दूसरा प्रकार कुछ इस प्रकार का है जैसा कि "एक चिकित्सक एवं रोगी में सम्बंध होता है। इस प्रकार में लोग ग्रामीण समुदाय में आकर अपने आर्थिक या कल्याणकारी कार्यकलापों को तय (निर्धारित) करते हैं एवं ग्रामीण क्षेत्रों में इन कार्यकलापों का संचालन करते हैं। यहां पर इन कार्यकलापों को संचालित करने हेतु साधनों की तलाश करने का कार्य संगठन करते हैं एवं ग्रामीणों के लिए इन कार्यकलापों का प्रारंभ एवं संचालन करते हैं। इस प्रकार ग्रामीण जनता एवं संगठन के बीच जो सम्बंध होता है वह लगभग उसी प्रकार का होता है जैसा कि एक संरक्षक एवं आसामी के बीच होता है और अन्त में छोटी-छोटी आवश्यकताओं के लिए भी स्वैच्छिक संगठनों पर निर्भरता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। भूमिका के तीसरे में स्वैच्छिक संगठन इस प्रकार से कार्य करते हैं जिससे कि ग्रामीण समुदाय में जागृति उत्पन्न हो एवं वे अपनी समस्याओं पर स्वयं ही मनन करने के योग्य हो सकें एवं अनेक ऐसे साधनों के सन्निकट लाने का प्रयास करते हैं जहां कि वे अपनी समस्याओं को हल करने के योग्य हो सकें। इस प्रकार ये संगठन लोगो में एक ऐसी क्षमता का विकास करते हैं जिससे कि वे सरकार से अथवा अन्य साधनों से अपने हकों या अधिकारों को प्राप्त करने की जिम्मेदारी को समझ सकें।

अनुभवों के आधार पर यह देखा गया है कि प्रथम दो प्रकार के उदाहरणों में प्रभावी समूह सदैव ही सौदे का श्रेष्ठ भाग हथिया लेते हैं एवं संगठन केवल एक दाता अथवा संरक्षक या शुभचिंतक की भूमिका ही अदा करते हैं। सम्बंधित लोगों में उनकी अपनी समस्याओं के सम्बंध में अर्थपूर्ण परिसंवाद का अभाव होता है।

तीसरे प्रकार की भूमिका सबसे अधिक उपयुक्त है यद्यपि इसके द्वारा लाभ प्राप्त होने की प्रक्रिया धीमी एवं कठिनाइयों से पूर्ण होती है परन्तु अंत में स्थायी परिणामों को प्राप्त करने में सहायक होती है। इस प्रक्रिया के द्वारा लोग अपनी समस्याओं एवं आवश्यकताओं पर विचार करने का ज्ञान एवं शक्ति प्राप्त करते हैं एवं अपनी सहायता के लिए सही साधन तलाश करते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति को बदलने के अपने प्रयत्न में तीनों प्रकार की भूमिकाओं में से किसी एक को चुनने में स्वैच्छिक संगठनों के सामने कई कठिनाइयां आती हैं। यह स्वैच्छिक संगठनों की क्षमता, साधन, व्यक्तित्व एवं सिद्धांतों के ऊपर बहुत कुछ निर्भर करता है। ग्रामीण विकास में स्वयंसेवी गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए 201 परियोजनाओं की स्वीकृति "लोक-कार्यक्रम एवं ग्राम्य टेक्नोलाजी विकास परिषद" द्वारा प्रदान की गई है। इस संस्था द्वारा विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को लागू करने वाले स्वयंसेवी संगठनों को निर्धारित कार्यक्रम बजट से धन उपलब्ध कराया जाता है।

केन्द्र सरकार द्वारा ग्रामीण विकास में स्वयंसेवी गतिविधियों के संचालन हेतु वर्ष 1985-86 से मार्च 1989 तक 696 लाख रुपये की राशि "लोक कार्यक्रम एवं ग्राम्य टेक्नोलाजी विकास परिषद" के माध्यम से उपलब्ध कराई गई। इसके अतिरिक्त इस परिषद द्वारा मार्च 1989 तक ग्रामीण क्षेत्रों में स्वैच्छिक संगठनों द्वारा संचालित 338 परियोजनाओं को स्वीकृत करके उन्हें 2162 लाख रुपये की राशि प्रदान की गई।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु कई परियोजनाएं स्वैच्छिक संगठनों द्वारा संचालित की जा रही हैं। अतः आशा की जानी चाहिए कि समय के साथ इन संगठनों द्वारा ग्रामीण विकास में और भी अधिक महत्वपूर्ण व प्रभावी भूमिका अदा की जाएगी।

सहकारी संस्थाओं व स्वैच्छिक संगठनों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए सुझाव

सहकारी संस्थाओं के संबंध में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि इनके द्वारा कृषकों को दिए जाने वाले ऋण समय पर वापस नहीं आते। आंकड़ों के अनुसार सहकारी बैंकों के 55 प्रतिशत ऋण ही समय पर वापस आ पाते हैं। इस समस्या के समाधान के लिए रिजर्व बैंक द्वारा समय-समय पर नियुक्त समितियों की सिफारिशों पर अमल करना चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि विभिन्न केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा चलाई गई ग्रामीण विकास से संबंधित योजनाओं में सहकारी संस्थाओं ने सराहनीय कार्य किया है किन्तु वर्तमान में इनके आन्तरिक संगठन व कार्य प्रणाली को विभिन्न दोषों ने ग्रसित कर रखा है, फलस्वरूप इन संस्थाओं से आशानुकूल लक्ष्य तक पहुंचने में काफी कठिनाइयां आ रही हैं। इनके लिए कई कारण उत्तरदायी हैं—पहला कारण तो सहकारी बैंकों के संगठन पर राजनैतिक व्यक्तियों का प्रभाव है। ये लोग अपने स्वार्थ के लिए अपने परिवार एवं रिश्तेदारों को अधिकाधिक लाभ दिलाने में लगे रहते हैं। परिणामस्वरूप वास्तव में गरीब एवं समाज के पिछड़े वर्ग के जिन लोगों को जो लाभ मिलना चाहिए वे उससे वंचित रह जाते हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन संस्थाओं के संगठन के लिए ऐसे नियम बनाएं जाए कि इस क्षेत्र में राजनीति का अनावश्यक हस्तक्षेप न हो और ये संस्थाएं सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक रूप से शक्तिशाली लोगों के दबाव से मुक्त होकर कार्य करें। दूसरा कारण—आजकल ग्रामीण क्षेत्रों में बहुअभिकरण संस्थाओं की स्थापना के फलस्वरूप इनके सामने प्रतिस्पर्धा की समस्या का उत्पन्न होना है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि वाणिज्यिक बैंकों की तरह सहकारी बैंकों में कार्य करने वाले कर्मचारियों को भी उचित प्रशिक्षण दिया जाए तथा सरकार को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे स्थानीय संस्थाएं अपनी बचतों को इन बैंकों में जमा करें। तीसरा कारण, इन बैंकों के सामने सबसे जटिल समस्या अतिदेय की है जो निरंतर बढ़ती जा रही है। इन संस्थाओं द्वारा दिए गए ऋणों की वसूली ठीक प्रकार से नहीं हो पाती है। फलस्वरूप इन्हें अपनी वित्तीय स्थिति ठीक रखने में बहुत कठिनाई होती है। सरकार को ऐसे उपाय करने चाहिए जिससे वसूली की स्थिति में सुधार हो सके। वसूली में सुधार होने पर बैंकों के आगे के ऋण देने के अवसरों में वृद्धि होगी।

स्वैच्छिक संगठनों के संबंध में यह देखा गया है कि इनके पास वित्तीय सहायता की कमी रहती है। अतः सरकार व अन्य वित्तीय संस्थाओं को चाहिए कि इन संगठनों को पर्याप्त वित्त व अन्य आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराएं साथ ही लोगों को ऐसे संगठनों के रूप में नए उत्साह के साथ सामने आना चाहिए, क्योंकि ग्रामीण विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें सभी की सहभागिता अनिवार्य है।

(शेष पृष्ठ 18 पर)

पंचायती व्यवस्था का दूसरा रूप है सहकारिता

हरि बिश्नोई

आपसी सहयोग के आधार पर सामूहिक उन्नति के लिए नैतिक कार्य करने को सहकारिता शब्द की परिभाषा से जोड़ा गया है लेकिन हमारे देश में इस श्रेष्ठतम प्रणाली का निकृष्टतम स्वरूप भी देखने को मिल सकता है। दुग्ध, उर्वरक-संयंत्र और कृषि-ऋण आदि के अलावा आवासीय व्यवस्था को सुलझाने में भी सहकारी क्षेत्र का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। गुजरात की डेयरी कोआपरेटिव पर हम गर्व कर सकते हैं लेकिन पिछड़े हुए ग्रामीण क्षेत्रों में मची लूट-खसोट, घांधले- बाजी और करोड़ों रुपये के डूबे हुए कर्जे हमें यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि कहीं न कहीं कोई खामी अवश्य है जिसे ढूंढ कर दूर किया जाना चाहिए।

नई चीनी मिलों को सहकारी क्षेत्र में लाइसेंस दिए जा रहे हैं। बड़ी-बड़ी कताई मिलें भी सहकारी क्षेत्रों में खोली हैं। दाल, तेल, घी, साबुन जैसी रोजमर्रा की चीजों का उत्पादन सहकारी क्षेत्र में अधिकाधिक होना चाहिए। सुपर बाजारों के माध्यम से देश के बड़े नगरों में उपभोक्ता वस्तुओं का जो वितरण किया जा रहा है उससे उचित दाम और अच्छी क्वालिटी का भरोसा बढ़ा है लेकिन महानगरों के अतिरिक्त जिन शहरों में सहकारी सुपर बाजार चल रहे हैं उनमें से अधिकांश की खस्ता हालता है। आखिर क्यों? इसके अलावा सबसे बड़ी और चिन्ताजनक बात यह है कि अधिकांश सहकारी संस्थाओं के प्रबंध में सदस्य या पदाधिकारी उदासीन रहते हैं जबकि सहकारिता आन्दोलन के संदर्भ में यह नितान्त आवश्यक है कि उन्हें अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों के प्रति सजग होना ही चाहिए। साथ ही साथ समिति की उपविधियों, सहकारी अधिनियम और नियमों के सम्बन्ध में भी रुचि एवं बुनियादी बातों की जानकारी होनी चाहिए अन्यथा सामाजार्थिक क्रान्ति के इस महायज्ञ में उनकी भूमिका संदिग्ध ही बनी रहेगी।

सहकारी आन्दोलन के दर्शन एवं सिद्धान्तों के रचनात्मक तथा जनोपयोगी पक्ष का व्यावहारिक ज्ञान ही सहकारी शिक्षा है। इस शिक्षा को योजनाबद्ध ढंग से चलाने तथा उसे व्यवहार में लाने का तरीका सहकारी शिक्षा है। प्रौढ़ शिक्षा की ही भांति सहकारी-शिक्षा भी हमारे ज्ञान में वृद्धि करती है। इसमें प्रौढ़, युवक और महिलाएं सभी शामिल हो सकती हैं। सहकारी शिक्षा के द्वारा मूल रूप में हमें सहकारिता के विषय में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त होती है जबकि आज हमारे दैनिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सहकारिता का समावेश हो चुका है। ऐसी स्थिति में सहकारी सदस्यों एवं सम्भावित सदस्यों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे सक्रिय होकर सहकारी शिक्षा ग्रहण करेंगे और अपनी भूमिका का वैविध्यपूर्ण ढंग से निर्वाह करेंगे किन्तु सही भूमिका के निर्वाह के विषय में सोचना सहकारी शिक्षा के अभाव में व्यर्थ सिद्ध होगा। सहकारी शिक्षा कार्यक्रम राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक सहकारी यूनियन चला रही हैं।

जन-जागरण

सहकारिता आन्दोलन पूरे विश्व में जहां भी चल रहा है उसके क्षेत्र भले ही अलग-अलग हों लेकिन उसके सिद्धांत सभी जगह एक से हैं। यही एकरूपता सहकारी शिक्षा का आधार है। स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप होने से शिक्षा का माध्यम भले ही दूसरा हो किन्तु प्रथम चरणों में संवर्ग का आधार वही सब है, जो मिल-जुल कर काम करने तथा व्यक्तिगत स्वार्थ के स्थान पर सामूहिक हितों की रक्षा करने का संकल्प करने के लिए प्रेरित करती है। संगठित प्रयासों के लिए, खासकर सहकारी संस्थाओं के विकास को दृष्टिगत रखते हुए तो इस बात की तीव्र आवश्यकता महसूस होती है कि जहां एक ओर हमारी समितियों के सभी स्तर के कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था हो वहीं दूसरी ओर उन सभी लोगों के लिए जो सहकारिता रूपी शरीर में रक्त कणों की भांति अपना महत्व रखते हैं और समिति की सदस्यता स्वीकारते हुए अपना दायित्व बखूबी निभाने की इच्छा रखते हैं उनके लिए सर्वप्रथम सहकारी शिक्षा की व्यवस्था होना अनिवार्य है।

जहां भी सहकारी समितियों में कुछ गिरावट की स्थितियां पैदा हुई हैं उनकी यदि गहराई से जांच की जाए तो यह पक्ष कहीं न कहीं अवश्य सामने आएगा कि सहकारी सदस्यों अथवा पदाधिकारियों से या तो कहीं चूक हुई है अथवा उनकी अनभिज्ञता से ऐसा हुआ है। यही अनभिज्ञता दूर करने के लिए सहकारी शिक्षा की व्यवस्था इतने व्यापक तौर पर की गई है कि यदि व्यक्ति के मन में जरा भी लगन है तो वह सहकारिता के विषय में पूरी जानकारी प्राप्त कर सकता है।

सामूहिक कल्याणार्थ

अपने देश में गुजरात की दुग्ध सहकारिता "अमूल" से स्पष्ट संकेत का एहसास होता है कि सहकारी आन्दोलन की सफलता के लिए सहकारी समाज का होना आवश्यक है। जब

तक परस्पर सहयोगी भावना का विकास नहीं होगा तब तक सहकारी क्षेत्र में जो उपलब्धियां होंगी वे वास्तविक नहीं वरन् थोपी गई होंगी या फिर सरकारी तंत्र के द्वारा दी गई होंगी लेकिन बैसाखियों के सहारे कोई व्यक्ति चल तो सकता है लेकिन दौड़ नहीं सकता। अतः क्यों न शुरू से ही इस बात के प्रयत्न किए जाएं कि पूरे समाज में आपसी सहयोग के द्वारा विकास की बात गहरे तक उतर जाए। तभी हमारी सहकारी समितियां आत्म-निर्भर हो सकेंगी तथा गरीबों के हितों की रक्षा हो सकेगी क्योंकि सहकारिता आन्दोलन ऐसा जन-आन्दोलन है जिसमें अधिकतर निर्बल वर्ग के लोग शामिल हैं। जन-आन्दोलन के लिए यह आवश्यक है कि वह आत्म-नियंत्रित हो और आत्म नियंत्रित होने के लिए भी सहकारी शिक्षा की आवश्यकता है। सहकारी शिक्षा से ही जनसमूह में सहकारिता की वास्तविक भावना पैदा की जा सकती है। यही भावना सहकारी सदस्यों द्वारा सहकारी समिति के कारोबार में उनके चिन्तन और गतिशीलता को परिलक्षित करती है। सामूहिक कल्याण की दिशा में उनके योगदान को प्रभावित करती है।

अनेक विद्वानों का मत है कि व्यक्तिगत रूप से सोचने से बेहतर होता है मिलकर सोचना, साथ ही भविष्य के लिए सोचना। सिर्फ अपने लिए नहीं बल्कि सभी के लिए। लेकिन हमारा दृष्टिकोण आशावादी हो। हमारे अन्दर उत्साह हो तथा हम नेतृत्व के लिए इच्छुक एवं समर्पित हों किन्तु यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि हम सहकारी सिद्धान्तों से भली-भांति परिचित हों। यही कारण है कि सहकारिता के आधारभूत छः सिद्धांतों में से एक सिद्धांत सहकारी शिक्षा भी है क्योंकि कोई भी सहकारी समिति तभी संगठित की जा सकती है जबकि उसकी स्थापना करने वाले लोग सहकारिता के सिद्धांत एवं प्रणाली से सुपरिचित हो चुके हों।

भारतीय सहकारिता आन्दोलन में महाराष्ट्र के सहकारी शक्कर कारखानों, गुजरात की अमूल डेरी और इफ्को आदि पर हम अवश्य गर्व कर सकते हैं लेकिन साथ ही साथ ग्रामीण अंचलों में फैली प्राथमिक स्तर की लाखों सहकारी समितियां आज भी आर्थिक भंवर में फंसी हुई हैं। शहरी क्षेत्रों में सुपर बाजारों तथा सहकारी आवास समितियों से आम आदमी को राहत अवश्य मिली है किन्तु प्रायः प्रबंधन में धांधली की शिकायत सहकारी संस्थाओं के साथ हमेशा रही है। इसके अलावा लम्बे समय तक निर्वाचन का न होना अथवा प्रभावशाली लोगों का वर्चस्व बना रहना भी सहकारिता के विकास में बाधक है।

भारत में सहकारिता आन्दोलन के प्रबल समर्थक पं. नेहरू की जन्म तिथि 14 नवम्बर को होती है। इस अवसर पर प्रति वर्ष 14 से 21 नवम्बर तक अखिल भारतीय सहकारिता सप्ताह मनाया जाता है। देश में चल रही सहकारी संस्थाएं इस सप्ताह में विभिन्न समारोह आयोजित करती हैं। सहकारी सदस्यों में जागरुकता लाने तथा सहकारी संस्थाओं को आत्म-निर्भर बनाने की दिशा में भी कारगर ढंग से प्रयास किए जाने आवश्यकता है। तभी अखिल भारतीय सप्ताह जैसे आयोजन भी सार्थक सिद्ध हो सकते हैं।

एच-88, शास्त्री नगर,
मेरठ-250005 (उ. प्र.)

(पृष्ठ 16 का शेष)

इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में सहकारी संस्थाओं एवं स्वैच्छिक संगठनों की अत्यंत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है तथा भारतीय ग्रामीण विकास में ये संस्थाएं काफी हद तक अपना सहयोग भी दे रही हैं। ग्रामीण क्षेत्र में इनकी उपलब्धियां उल्लेखनीय हैं परन्तु इनकी प्रगति का सावधानी से अवलोकन करने एवं इनके विकास के मार्ग में आने वाले अवरोधों को दूर करने की आवश्यकता है। यदि ऐसा हो सके तो निश्चित ही ये संस्थाएं अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल होंगी तथा देश की आठवीं पंचवर्षीय योजना में निर्धारित ग्रामीण विकास के सर्वाधिक महत्वपूर्ण व प्राथमिकता प्राप्त लक्ष्य को हासिल करने में समर्थ हो सकेंगी।

व्याख्याता,
अर्थशास्त्र विभाग,
रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर (म. प्र.)

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकिंग का सिंहावलोकन

कृष्णगोपाल गुप्ता

भारत एक कृषि प्रधान देश है, इस कथन की प्रमाणिकता इस कथन से स्पष्ट है कि देश की 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है तथा भारत के कुल राष्ट्रीय उत्पादन में 40 प्रतिशत हिस्सा कृषि का है। अतः यदि हम गांवों का विकास करने का निश्चय करते हैं तो स्वतः ही सम्पूर्ण देश की अर्थव्यवस्था का विकास हो सकेगा और ग्रामीण क्षेत्र के पिछड़ेपन का मुख्य कारण ग्रामीण संसाधनों के दोहन का अभाव है जो कि वित्तीय साधनों की कमी के कारण है।

भारत सरकार ने स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से ही किसानों को ऋण देने एवं ऋणग्रस्तता से मुक्ति दिलाने के लिए अनेक उपाय किए हैं परन्तु संस्थागत वित्त की अपर्याप्त उपलब्धि किसानों एवं ग्रामीण गरीबों को ऋणग्रस्तता एवं गरीबी से मुक्ति नहीं दिला पाई है। ग्रामीणों को ऋणग्रस्तता से मुक्ति दिलाने के लिए सरकार ने प्रथम प्रयास 1969 में 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण करके किया, इसके उपरान्त भी ग्रामीण वित्त की कमी महसूस करते हुए बैंकिंग आयोग 1972 ने तथा शिवरामन कमेटी 1974 ने देश में ग्रामीण बैंकों की स्थापना का सुझाव दिया जिसके परिणामस्वरूप सरकार द्वारा 26 सितम्बर, 1975 को एक अध्यादेश जारी कर पूरे देश में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की घोषणा की गई और 2 अक्तूबर, 1975 को गांधी जयन्ती के शुभ अवसर पर उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पश्चिम बंगाल एवं राजस्थान राज्यों में कुल 5 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की।

ग्रामीण बैंकों का उद्देश्य

ग्रामीण बैंकों का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली जनसंख्या का समुचित विकास करना है। जिसमें किसानों, छोटे एवं सीमान्त कृषकों, कृषक, मजदूरों, ग्रामीण शिल्पकारों एवं छोटे कारीगरों आदि को ऋण एवं सुविधाएं प्रदान करना है ताकि ग्रामीण क्षेत्र के रहने वालों का जीवन स्तर ऊंचा उठ सके तथा ग्रामीण समाज महाजनों के चंगुल से बच सके।

पूंजी संरचना

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम, 1976 में प्रत्येक बैंक की अधिकृत पूंजी 1 करोड़ रुपये थी और जारी पूंजी 25 लाख रुपये थी जो कि 1987 में बदलकर 5 करोड़ रुपये अधिकृत पूंजी तथा जारी पूंजी 1 करोड़ रुपये कर दी गई है। इसमें केन्द्र सरकार का योगदान 60 प्रतिशत, राज्य सरकार का योगदान 20 प्रतिशत तथा प्रवर्तित बैंक का योगदान 20 प्रतिशत रखा गया है।

ग्रामीण बैंकों की प्रगति

ग्रामीण क्षेत्रीय बैंक भारतीय ग्रामीण वित्त के क्षेत्र में पिछले 15 साल से कार्य कर रहे हैं। सन् 1975 में इन बैंकों की संख्या 6 थी तथा इनकी शाखाओं की संख्या 17 थी जो कि 30 जून, 1981 को बढ़कर क्रमशः 102 एवं 3784 हो गई। इसी प्रकार बढ़ते-बढ़ते जून 1989 में इन बैंकों की संख्या 196 हो गई तथा इनकी शाखाओं की संख्या 13500 हो गई है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक का कार्य विवरण संक्षेप में निम्न है—

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की प्रगति

क्र. सं.	विशेष विवरण	1980	1986	1987	1989
1.	क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या	73	194	196	196
2.	शाखाओं की संख्या	3279	12838	13509	13523
3.	जिलों की संख्या जहां सुविधाएं उपलब्ध हैं	144	351	363	363
4.	कुल जमाएं (लाखों में)	19983	171494	230975	230600
5.	कुल पेशगियां (लाखों में)	24338	178484	223206	225200

स्रोत : मुद्रा व वित्त की वार्षिक रिपोर्टों से संकलित व अन्य सेमिनार से।

तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि क्षेत्रीय बैंकों का कार्य क्षेत्र निरन्तर बढ़ता जा रहा है। जहां क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में 30 जून, 1980 को कुल जमा 199 करोड़ रुपये था वह बढ़कर 30 जून, 1989 को 2306 करोड़ रुपये हो गई है तथा जहां तक पेशगियों का सवाल है वह 30 जून, 1980 को 243 करोड़ से बढ़कर 2252 करोड़ रुपये हो गई है जो कि निश्चय ही प्रशंसनीय है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों की संख्या में भी काफी वृद्धि हुई है। दिसम्बर, 1987 तक ग्रामीण बैंकों के सभी श्रेणी के कर्मचारियों की संख्या 50693 थी जिनमें से 15670 अधिकारी, 9129 क्षेत्रीय पर्यवेक्षक, 22584 क्लर्क और 3410 अधीनस्थ कर्मचारी कार्यरत थे। उपरोक्त कुल कर्मचारियों में से 81.67 प्रतिशत कर्मचारी प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सामने कुछ मुद्दे

यद्यपि अपने उद्देश्यों को पूरा करने में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को काफी सफलता मिली है, लेकिन अभी कुछ समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है जो निम्न हैं:

- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं के विस्तार में क्षेत्रीय असमानताएं दृष्टिगोचर होती हैं। जैसे देश के 4 राज्यों में इनकी 54 प्रतिशत शाखाएं स्थापित हैं। ये राज्य उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश और बिहार हैं जबकि उत्तर पूर्व क्षेत्र में इनका नाम मात्र विस्तार हुआ है।
- ग्रामीण बैंकों द्वारा कर्मचारियों को आकर्षित करने के लिए अन्य बैंकों की तरह वेतन व सुविधाएं प्रदान नहीं की जाती हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की दिसम्बर, 1987 तक 569 करोड़ रुपये की बकाया राशि थी जिसके वसूल न हो पाने के कारण भविष्य में ऋण देने की सामर्थ्य पर खराब प्रभाव पड़ता है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा अन्य वाणिज्यिक बैंकों की ऋण देने व जमा करने की विधियों को ही अपनाया गया है जबकि दोनों के कार्य क्षेत्र अलग-अलग हैं।
- ग्रामीण वित्त प्रबंधन के लिए कम से कम 20,000 शाखाओं का होना चाहिए जो अभी उपलब्ध नहीं हो सकी हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात, डाक, टेलीफोन, चिकित्सा आदि सुविधाओं का अभाव है जिसके कारण कर्मचारी वर्ग गांवों में जाना पसन्द नहीं करते।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को अन्य व्यावसायिक बैंकों की प्रतियोगिता का सामना भी करना पड़ता है।

उपरोक्त समस्याओं के अध्ययन से स्पष्ट है कि ग्रामीण बैंकों ने चाहे कितनी ही ऊंचाइयां अर्जित कर ली हों लेकिन ये अपने उद्देश्यों में पूर्णतया सफल साबित नहीं हैं। इनकी समस्याओं के निराकरण के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को अपने अग्रणी बैंकों से सौहार्द्रपूर्ण संबंध रखने चाहिए जिससे कि ऋणों से संबंधित नीतियों का सही ढंग से निर्माण हो सके।
- बैंकों के कर्मचारियों के लिए आवास, चिकित्सा एवं यातायात आदि की सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए जिससे कि वे शहरों की ओर आकर्षित न हों।
- ऋण प्रदान करने के उपरान्त देखरेख का काम ग्रामीण बैंकों तथा ब्लाक के अधिकारियों द्वारा संयुक्त रूप से किया जाना चाहिए।
- बैंकों द्वारा ऋण उत्पादक कार्यों के लिए ही दिए जाएं।

  सभी विद्यमान छोटी परियोजनाओं को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में उनकी शाखाओं के अनुपात में बांट देना चाहिए।

  ऋण आवेदन एवं स्वीकृति के अन्तराल को कम से कम करना चाहिए। प्रत्येक वर्ष ब्लाक स्तरों पर सेमीनारों का आयोजन किया जाए जिसमें ग्रामीण विकास से संबंधित चर्चा की जानी चाहिए।

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में साख व बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इनकी खोली गई शाखाओं में 90 प्रतिशत शाखाएं ऐसे क्षेत्र में हैं जहां पहले बैंकिंग सेवाएं नहीं हैं। अतः अन्त में यही कह सकते हैं कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा दी गई सहायता में कमजोर वर्गों को उचित प्रतिनिधित्व मिला है जो अत्यन्त ही प्रशंसनीय है लेकिन अभी जिन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर इनकी स्थापना की गई थी उसे प्राप्त करने में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को कड़ी मेहनत करनी होगी तभी उद्देश्यों में सफल हो सकते हैं।

आर्थिक प्रशासन एवं
वित्तीय प्रबंध विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

उत्तर प्रदेश में ग्रामीण निर्बल आवास

डा. गजेन्द्रपाल सिंह

ग्रामीण विकास कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाते हुए ग्रामीण अंचल में निवास करने वाले गरीब व निर्बल वर्ग के परिवारों को देश के आर्थिक विकास की मुख्य धारा के साथ जोड़ना है। ग्रामीण अंचलों में निवास करने वाली गरीब जनसंख्या व कृषि श्रमिक अनेकानेक समस्याओं के साथ-ही-साथ आवास की समस्या से भी बुरी तरह से ग्रस्त हैं। साधारणतया ये गरीब, भूमिहीन कृषि श्रमिक व शिल्पकार ग्राम समाज या मालिक की भूमि पर उनकी अनुमति से झोपड़ी बनाकर रहते हैं। इस सन्दर्भ में डा. राधाकमल मुकर्जी ने लिखा है कि "इन झोपड़ियों में मात्र इतना ही स्थान रहता है, जहां पर श्रमिक केवल पैर फैलाकर सो सकता है। एक ही झोपड़ी में अनेक व्यक्तियों के सोने से पर्दा न होने के कारण मर्यादा समाप्त होती है। इन झोपड़ियों में शुद्ध वायु एवं प्रकाश के लिए खिड़कियों का तो पता तक भी नहीं होता है, इनकी दीवारें व आंगन सीलन से भरे रहते हैं, जिससे इन ग्रामीण गरीब व निर्बल वर्ग के लोगों का स्वास्थ्य अत्यन्त ही खराब रहता है। अतः ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में निर्बल वर्ग व भूमिहीन कृषि श्रमिकों के आवास की समस्या का निराकरण उच्च प्राथमिकता के आधार पर किया जाना परमावश्यक हैं।"

उत्तर प्रदेश देश का सर्वाधिक जनसंख्या वाला प्रदेश है। वर्ष 1981 की जनगणना के अनुसार प्रदेश की कुल जनसंख्या 11.9 करोड़ है, इस प्रकार प्रदेश में देश की कुल जनसंख्या का 1/6 भाग निवास कर रहा है। यदि विश्व के विभिन्न देशों पर नजर डाली जाए तो यह विदित होता है कि केवल चीन, रूस, अमेरिका, जापान व इण्डोनेशिया ही जनसंख्या की दृष्टि से इस प्रदेश से बड़े हैं। प्रदेश की कुल जनसंख्या का 9.10 करोड़ अर्थात 82.05 प्रतिशत 112566 गांवों तथा 1.99 करोड़ अर्थात् 17.95 प्रतिशत जनसंख्या 686 नगरों में निवास कर रही है। प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले भूमिहीन, निर्बल वर्ग, अनुसूचित जाति व जनजाति के व्यक्तियों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने व सामाजिक न्याय दिलाने के उद्देश्य से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में कृषि विकास, रोजगार सृजन, ग्रामीण विद्युतीकरण व आवास सुविधाओं के विकास कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता के आधार पर स्वीकार किया गया है।

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में ग्रामीण आवास सुविधाओं का विकास अत्यन्त ही महत्वपूर्ण कार्य है। निर्बल वर्ग के लोगों को आवास की समुचित सुविधा उपलब्ध कराकर न केवल उनमें उच्चतर सामाजिक व नैतिक मूल्यों का समावेश कराया जा सकता है पर उनके जीवन में गुणात्मक सुधार लाना भी संभव हो पाएगा। उत्तर प्रदेश में ग्रामीण आवास विकास की दिशा में सरकार द्वारा उठाए गए कदमों का अध्ययन दो वर्गों में विभाजित करके किया जा सकता है।

आवास स्थलों का आवंटन

प्रदेश में आवास सुविधाओं के विकास हेतु निर्बल वर्ग के लोगों, भूमिहीन कृषि श्रमिक व ग्रामीण शिल्पकारों को आवास निर्माण हेतु आवास स्थलों के आवंटन का कार्य बड़ी ही तत्परता से सम्पन्न किया गया है। इस योजना के अन्तर्गत मार्च 1989 तक 2100463 परिवारों को आवास स्थल आवंटित किए गए हैं। वर्ष 1989-90 में 50000 आवास स्थल आवेदन के लक्ष्य के सापेक्ष 141626 आवास स्थलों का आवंटन किया गया है जो निर्धारित लक्ष्य का 283.3 प्रतिशत है।

भवनों का निर्माण व आवंटन

ग्रामीण निर्बल वर्ग व भूमिहीन कृषि श्रमिकों को आवास की सुविधा उपलब्ध कराने में आवास स्थलों के आवंटन के कार्य को उत्तर प्रदेश सरकार ने पर्याप्त नहीं समझा, पर आवास स्थल आवंटन के साथ ही साथ भवनों के निर्माण व आवंटन का कार्य भी प्रारंभ किया। प्रदेश में भवन निर्माण व आवंटन का कार्य दो योजनाओं के द्वारा क्रियान्वित किया जा रहा है।

ग्रामीण निर्बल वर्ग आवासीय योजना

उत्तर प्रदेश में ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले भूमिहीन कृषि श्रमिक, निर्बल वर्ग, अनुसूचित जाति व जनजाति के व्यक्तियों को आवास की सुविधा उपलब्ध कराने हेतु ग्रामीण निर्बल वर्ग आवास योजना का शुभारम्भ प्रदेश सरकार द्वारा वर्ष 1979-80 में किया गया। इस योजना के अधीन आवास विहीन, आवास अभावग्रस्त, निर्बल वर्ग के परिवारों को वर्ष 1979-80 से वर्ष 1987-88 के बीच 143451 भवनों का आवंटन किया जा चुका है। वर्ष 1988-89 में निर्बल आवासीय योजना के अन्तर्गत 350 लाख रुपये के परिव्यय से 15024

आवासों के निर्माण का लक्ष्य स्वीकार किया गया था। दिसम्बर 88 तक की मध्यावधि प्रगति को सम्मिलित करते हुए वर्ष 1988-89 में 2332 आवासों का निर्माण 59.40 लाख रुपये के परिव्यय से पूरा किया जा चुका था। सितम्बर 1988 से यह योजना समाप्त कर दी गई और इसके स्थान पर हरिजन व निर्बल वर्ग आवास योजना का शुभारम्भ 2 अक्तूबर 1988 से किया गया। इस नई योजना के तहत 6000/- रुपये की लागत से निर्बल ग्रामीण, अनुसूचित जाति व जनजाति के परिवारों को आवास उपलब्ध कराए गए हैं। इस 6000/- रुपये की लागत में 2000/- रुपये लाभार्थी को बैंक से ऋण, 1000/- रुपये राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम से व 3000/- रुपये अनुदान के रूप में उपलब्ध कराया जाता है। इस आवास योजना के तहत उत्तर प्रदेश सरकार ने ऐतिहासिक सफलता प्राप्त की है। वर्ष 1988-89 में प्रदेश के सभी विकास खण्डों में एक लाख भवन लाभार्थियों को उपलब्ध कराए जा चुके हैं। वर्ष 1989-90 में 30000 आवासों के निर्माण लक्ष्य के विरुद्ध 133503 भवनों का निर्माण पूरा किया जा चुका है। वर्ष 1990-91 में इस योजना के अन्तर्गत 2525 लाख रुपये का परिव्यय निर्धारित किया गया है।

वर्ष	आवंटित आवास स्थल	निर्बल आवास	इन्दिरा आवास
1979-80 से 1987-88 तक		143451	
1988-89	मार्च 1989 तक 2100463	102332	23871
1989-90	141626	133503	32529

स्रोत : उत्तर प्रदेश वार्षिकी 1989-90, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग उ. प्र.।

इन्दिरा आवास योजना

गृह विहीन ग्रामीण अनुसूचित जाति व जनजाति के व्यक्तियों को आवास की सुविधा उपलब्ध कराने में इन्दिरा आवास योजना की बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका है। उपेक्षित, पीड़ित, व अत्यन्त ही गरीब परिवारों को आवास की सुविधा उपलब्ध कराने हेतु इस आवास योजना के अन्तर्गत वर्ष 1988-89 में 23871 आवासों का निर्माण कराया गया जो लक्ष्य का 102 प्रतिशत था। इसी क्रम में वर्ष 1989-90 में इस योजना के अन्तर्गत प्रदेश में 32315 इंदिरा आवास स्थलों के निर्माण के लक्ष्य के विरुद्ध 32529 इन्दिरा आवास स्थलों का निर्माण किया गया जो लक्ष्य का 139.5 प्रतिशत है।

प्रदेश में ग्रामीण आवास स्थल व भवनों के निर्माण तथा आवंटन की दिशा में कार्य अत्यन्त ही संतोषजनक चल रहा है, फिर भी अगले कुछ वर्षों में इस कार्यक्रम को और अधिक प्रभावी ढंग से लागू किए जाने की आवश्यकता है, जिससे निर्बल वर्ग के सभी ऐसे व्यक्तियों जिनके पास निजी आवास या आवास स्थल नहीं है उन्हें आवास की सुविधा उपलब्ध हो सके।

(आंकड़ों का संकलन उ. प्र. वार्षिकी 1988-89 व 89-90 से किया गया है।)

अध्यक्ष
अर्थशास्त्र विभाग
कुंवर सिंह डिग्री कालेज
बलिया (उ. प्र.)

सौर-ऊर्जा

मोहन चन्द्र मन्टन

सूरज से लेकर प्रकाश हम
सौर शक्ति उपजाते हैं
इस अर्जित ऊर्जा से फिर
उपयोगी काम रचाते हैं
बिजली का दे ताप सौर-
चूल्हों से भोजन बन जाता,
सौर यंत्र से सागर का
खारा जल भी मीठा बन जाता
नई मशीनी तकनीक से—
सौर ऊर्जा चमत्कार कर
नई क्रांति जीवन में लाकर
सपनों को साकार कर दिया
जीवन में श्रृंगार भर दिया
मानव का उद्धार कर दिया।

ग्रामीण विकास और सहकारिता

जगदम्बी प्रसाद यादव

भारत गांवों का देश है। इसकी आत्मा किसान-मजदूर हैं। आज गरीबी, अशिक्षा तो है ही साथ ही यातायात का अभाव कष्टकर है तथा वर्षा के दिनों में और भी भयंकर हो जाता है। बिजली जो अब जीवन का अंग बन गई है लेकिन उसकी कमी है। स्कूल भवन एवं पठन-पाठन की सामग्री का नितान्त अभाव है। स्वास्थ्य चिकित्सा की तो कमी है ही, कहीं-कहीं शुद्ध पेयजल का भी अभाव है। सरकार के प्रयासों के बाद भी कुटीर उद्योग बढ़ने के बदले घटते ही गए। इसके कारण आधी आबादी गरीबी की रेखा के नीचे चली गई है। सरकार का ध्यान इस ओर गया है। सरकार ने ग्रामोद्योग की नीति, उद्देश्य तय किए हैं—इस पर विहंगम दृष्टि डालें—

1. ग्रामीण उद्योग का समेकित विकास।
2. खादी ग्रामोद्योग एवं अति लघु उद्योग, कुटीर उद्योग तथा उद्योगों को कच्चा माल प्रदान करना, विपणन में सहायता करना और विभिन्न सुविधा देने की व्यवस्था करना।
3. खादी उद्योग आयोग के क्षेत्रान्तर्गत लाए गए उद्योग तथा वे उद्योग जो भविष्य में आयोग के क्षेत्रान्तर्गत लाए जाएंगे।

ग्रामीण विकास में सरकारी रुपया कैसे लग रहा है—इसका अवलोकन म. प्र. सरकार द्वारा वर्ष 1990-91 हेतु प्रावधानिक राशि द्वारा किया जा रहा है जो निम्न प्रकार है:

4. हस्तशिल्प को बढ़ावा देना

   हथकरघे और विद्युत चालित करघे

   ग्रामीण उद्योग से संबंधित औद्योगिक सहकारी समितियां।

   चर्म उद्योग, हस्तशिल्प और रेशम उत्पादन को बढ़ावा देना।
5. कृषि पर आधारित ग्राम उद्योग।
6. समस्त प्रकार के ग्राम तथा अति लघु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना और उन्हें चलाने वाले हितग्राहियों को प्रशिक्षण।
7. शिक्षित बेरोजगारों के लिए स्वरोजगार योजना।
8. जहां-जहां भारी उद्योग लगे हैं उसका अनुसांगिक लघु कुटीर उद्योग का जाल गांव तक बिछाना।
9. वन आधार और खनिज आधार पर लघु उद्योग लगाना।
10. आधुनिक मांग के आधार पर लघु उद्योग बहुलक (पालीमर) और रसायन आधारित उद्योग।
11. विभिन्न गांवों में स्थानीय कलाओं को विकसित करनाऔर विपणन की प्रचार-प्रसार की व्यवस्था करना जैसे—कपड़ा छपाई, लकड़ी पर नक्कारी, कशीदाकारी, पत्थर पर नक्कासी, धातु की कलात्मक वस्तुएं, विभिन्न प्रकार के आभूषण, विभिन्न चीजों से बनाई कलात्मक चटाइयां एवं अन्य वस्तुएं, सोने-चांदी एवं कृत्रिम आभूषण के कार्य आदि।
12. गांव के विकास और किसान को अपने उत्पादन की सही कीमत दिलानी है और उन्हें जुटाना है अपने माल की प्रोसेसिंग करने की सुविधा, साधन और बाजार।
13. ग्रामीण महिलाओं का सांस्कृतिक विकास करना।

इस प्रकार की देशव्यापी सूचियां—राज्यों—जिला स्तर पर बनाई जा सकती हैं और बनाई भी गई हैं। इस पर सही ढंग से, उचित परिप्रेक्ष्य में लक्ष्य संकल्पना को, समर्पित भाव से जन उत्थान का मूल मंत्र मानकर दृढ़ इच्छा शक्ति से देश गांव आगे बढ़ता जायेगा। राष्ट्रीयकृत बैंकों के बाद गांव-समाज और ग्रामीण उद्योग-कृषि एवं उपभोक्ता के सबसे बड़े सहायक आर्थिक क्षेत्र में है तो वे हैं—सहकारी बैंक तथा इनके विभिन्न प्रकार की सहकारी संस्थाएं।

आज तो गांव शहर के उपभोग एवं विकास के बिना सहकारिता कर भी नहीं सकते हैं। भारत ने ही नहीं दुनिया ने इसे स्वीकार किया है। आज के युग को हम सहकारी युग ही कह

सकते हैं। जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जहां जन-जीवन के साथ सहकारिता सहयोग के लिए न खड़ी हो। सहकारिता के बिना विकास की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। भारतीय परिवार की ही स्वयं कल्पना सहकारिता का आधार है। आज दुनिया ने जिस भारतीय संयुक्त परिवार की कल्पना संजोये विश्वव्यापी संगठन बनाए हैं—सम्मेलन किए हैं उनमें से एक सम्मेलन के अध्यक्ष ने मुझे आग्रहपूर्वक आमंत्रित किया था और मैं गया था। दुर्भाग्य है कि अब भारतीय संयुक्त परिवार स्वयं में टूट गया है और भी टूट रहा है। गांव में सहकारी संस्था की सही रूप में स्थापना श्रेष्ठकर होगी। गुजरात राज्य इसमें देश का बहुत कुछ मार्गदर्शन कर सकता है।

क्र.	मद	प्रावधानिक राशि (लाख रुपये में)
1.	खादी-	307.70
2.	ग्रामोद्योग-	197.00
3.	राज्य-शासन (आयोजन)	
	खादी उत्पादन अनुदान	90.00
4.	प्रचार-प्रसार	16.00
5.	अन्तिम अनुदान	25.00
6.	हितग्राहियों को सहायता	92.00
7.	हितग्राहियों को प्रशिक्षण	26.00
8.	शिवच्छेदन केन्द्र हेतु सहायता	10.00
9.	कच्चे माल की आपूर्ति	9.00
10.	विपणन सहायता	21.00
11.	अधोसंरचना	9.00
12.	स्थापना अनुदान	30.00
13.	अमले का प्रशिक्षण	2.00
14.	कार्यालय भवन/आधुनिक यंत्रों का क्रम	5.00
	राज्य शासन (आयोजन)	
15.	स्थापना अनुदान	20.60

ग्रामीण क्षेत्र में सहकारिता-भूमि विकास बैंक, सहकारी बैंक, विस्कोमान, मत्स्य पालन सहकारिता, उपभोक्ता सहकारिता, डेयरी सहकारिता-दर्जनों की संख्या में सर्वत्र चालू है। कहीं इसका विस्तार है और कहीं कम विस्तार है। पर गांवों में सहकारिता बड़ी पुरानी संस्था के रूप में है।

अब तो यह उद्योग भवन निर्माण व्यापार में भी अपना स्थान बना रहा है। यह कहा जा सकता है कि सहकारिता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त होती चली जा रही है। लेकिन निहित स्वार्थ आज संगठित रूप में विशेषकर गांव के किसान-मजदूर सभी का शोषण कर रहा है।

निहित स्वार्थ ने सहकारी तंत्र पर और इसके नियम कानून को भी अपने वर्चस्व में कर लिया है। आश्चर्य है कि इस बात को सरकार और जनता भी जानती है परन्तु निहित-स्वार्थ-साधन-शक्ति सम्पन्न है।

अतः सहकारी आन्दोलन को सही अर्थो में सहकारी बनाने के लिए सहकारिता अधिनियम में संशोधन किया जाय कि यह निजी स्वार्थ और राजनीति से मुक्त हो।

इसमें सांसद-विधायक जैसे राजनीतिक प्रवीण लोग पदाधिकारी नहीं बनाए जाएं। प्राथमिक सहकारी साख समितियों में केवल किसान ही सदस्य बनाए जाएं।

सहकारी संस्थाओं की समयावधि तीन वर्ष निश्चित करनी चाहिए जिससे कि निहित स्वार्थ बलविहीन हो सकें।

केवल वे ही किसान सहकारी संस्थाओं के प्रबन्धन में भागीदार होंगे जो इन संस्थाओं से ऋण लेते हैं।

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन-जाति और महिलाओं की अनुपातिक आधार पर सहकारिता में भागीदारी निश्चित हो। सहकारिता की शिक्षा गांव के स्कूल से आरम्भ होनी चाहिए और इसके सैद्धान्तिक और व्यवहारिक पक्ष का दिया जाना परमावश्यक है। कालेज में भी दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाए।

सहकारिता कानून की जानकारी, लाभ, उपयोगिता—हर गांव हर घर को दी जाए तथा इसमें सही रूप में भाग लेने को प्रोत्साहित किया जाए।

युग आ गया है कि भारत सरकार का आधे से अधिक बजट गांव जाने लगा है, पर इसका समुचित समायोजन और खर्च हो—इसके लिए गांव समाज को तैयार नहीं किया गया है। आज अधिकारियों, ठेकेदारों का बोलबाला है। इस गठबंधन को सहकारिता और ग्रामीणों का प्रशिक्षण ही तोड़ सकता है। सहकारिता प्रशिक्षण की जानकारी देने के साथ जीवन को कैसे सुख दिया जाए इसकी भी जानकारी देने की व्यवस्था करें तो सहकारिता अपना कर्त्तव्य पूरा करेगी तथा ग्रामीण विकास गति पकड़ेगा।

19 पाकेट डी,
मयूर विहार फेज-II
दिल्ली-110091

उत्तर प्रदेश की खुशहाली में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का योगदान

डा. राकेश अग्रवाल

भारत के बड़े और कृषि प्रधान राज्य के रूप में उत्तर प्रदेश का महत्वपूर्ण स्थान है। देश के 5,75,000 गांवों में से एक लाख से अधिक गांव इसी प्रदेश में हैं। इस प्रदेश के 86 प्रतिशत लोग गांवों में रहते हैं तथा 77 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य से जुड़ी हुई है। पंजाब, हरियाणा के साथ उत्तर प्रदेश को भी कृषि के क्षेत्र में अग्रणी माना जाता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस प्रदेश के गांवों का सामाजिक तथा आर्थिक दोनों दृष्टियों से पर्याप्त विकास हुआ है। इसका श्रेय गांवों के समग्र विकास के लिए सरकार द्वारा समय-समय पर लागू किए जाने वाले कार्यक्रमों को जाता है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम इसमें सर्वोपरि है।

महात्मा गांधी ने कहा था कि गांवों की प्रगति के बिना आर्थिक विकास की कल्पना व्यर्थ है। इसीलिए स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया गया। 2 अक्तूबर, 1952 को चुने हुए क्षेत्रों में सामुदायिक विकास योजना लागू की गई जिसे ग्रामीण विकास की दृष्टि से धीरे-धीरे देश के सभी विकासखण्डों में लागू कर दिया गया। सामुदायिक विकास योजना से गांवों में परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई और सामाजिक-आर्थिक चेतना का विकास हुआ। गांवों के उत्थान के लिए लघु कृषक विकास एजेंसियां, सीमान्त कृषक एवं कृषि श्रमिक परियोजनाओं, सूखा उन्मुख क्षेत्र कार्यक्रम, काम के बदले अनाज कार्यक्रम, अन्त्योदय कार्यक्रम आदि योजनाएं लागू की गई किन्तु इन योजनाओं के दोहरेपन आदि कठिनाइयों के कारण 1978-79 में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम अपनाया गया। बीस सूत्री कार्यक्रम में भी ग्रामीण विकास पर समुचित जोर दिया गया।

2 अक्तूबर, 1980 से देश के समस्त 5011 विकासखण्डों में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम लागू कर दिया गया है। प्रारम्भ में यह योजना केवल 2300 विकास खण्डों में ही लागू थी। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को व्यापक रूप से लागू करने के पीछे देश के पिछड़े ग्रामीण समाज को देश की प्रगति का लाभ पहुंचाना है।

कार्यक्रम का उद्देश्य

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य एक निश्चित अवधि में गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले लोगों को रोजगार एवं आय के साधन सुलभ कराना है ताकि वे गरीबी रेखा के ऊपर आ सकें। ग्रामीण क्षेत्रों में लघु व सीमान्त किसानों, कृषि व गैर-कृषि श्रमिकों, ग्रामीण दस्तकारों, बेरोजगारों आदि को इस योजना के माध्यम से सम्बल प्रदान किया जाता है। लाभार्थी परिवारों में 30 प्रतिशत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के परिवारों को सम्मिलित करना अनिवार्य रखा गया है। विकास में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए लाभार्थियों में 30 प्रतिशत महिलाओं को शामिल करने का भी प्रावधान किया गया है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के माध्यम से आर्थिक विषमता के अन्तर को कम करके समाजवादी समाज की स्थापना का भी उद्देश्य रखा गया है। व्यावहारिक रूप से देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि सार्वजनिक क्षेत्र से मिलने वाली सुविधाओं को बड़े कृषकों तथा बिचौलियों ने हड़प लिया है। निर्धन ग्रामीण तक इनका लाभ नहीं पहुंच सका है।

कार्यक्रम की कार्य-नीति

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम गरीबी दूर करने की सरकार की नीति का एक मुख्य माध्यम है। इसके अन्तर्गत प्रति वर्ष प्रत्येक विकासखण्ड से 600 परिवारों का चयन कर उनको रोजगार तथा आय हेतु परिसम्पत्तियां उपलब्ध कराई जाती हैं। इन परिसम्पत्तियों पर जो व्यय होता है उसको बैंक ऋण तथा सरकारी अनुदान के रूप में उपलब्ध कराया जाता है। वर्तमान में अनुदान की सीमा छोटे किसानों के लिए 25 प्रतिशत, सीमान्त किसानों, कृषि श्रमिकों तथा दस्तकारों के लिए 33-$\frac{1}{3}$ प्रतिशत तथा आदिवासी परिवारों के लिए 50 प्रतिशत तक है। एक परिवार को सामान्य क्षेत्रों में 3,000 रुपये, सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम वाले भागों में 4,000 रुपये तथा आदिवासी परिवारों को 5,000 रुपये तक अनुदान मिल सकता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत पुराने तथा नए लाभार्थी परिवारों

के लिए लघु सिंचाई परियोजनाओं हेतु अनुदान की राशि पर कोई सीमा नहीं है।

शासन द्वारा अनुदान के रूप में जो राशि दी जाती है, उसका आधा भाग राज्य सरकार तथा आधा भाग केन्द्र सरकार द्वारा दिया जाता है। केन्द्र सरकार अपना योगदान कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिए जिम्मेदार जिला ग्रामीण विकास एजेंसी को सीधे भेजती हैं। उ. प्र. में कानपुर नगर और देहात के दो जिले मानकर 57 जिले ग्रामीण विकास अभिकरण समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को प्रभावी रूप से कार्यान्वित कराने के लिए निगरानी रखते हैं।

कार्यक्रम के कार्यान्वयन का मुख्य स्तर विकासखण्ड होता है जिस पर अनेक अधिकारी समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए नियुक्त रहते हैं। राज्य सरकार पर राज्यस्तरीय समन्वय समिति अनुमोदन का कार्य करती है। यह समिति जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को कार्यक्रम की आयोजना बनाने, कार्यान्वयन तथा निगरानी करने, विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित करने तथा अन्य सम्बन्धित विभागों से सम्पर्क बनाए रखने के लिए मार्गदर्शन देती है। केन्द्रीय स्तर पर एक केन्द्रीय समिति समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण युवाओं के लिए स्वरोजगार कार्यक्रम (ट्राइसेम) तथा ग्रामीण अंचलों में महिलाओं तथा बच्चों के विकास कार्यक्रम के लिए दिशा-निर्देशक सिद्धान्त बनाने, उनमें संशोधन करने तथा प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करती है।

लाभार्थी परिवारों की सूची ग्राम सभा द्वारा अनुमोदित की जाती है। 4800 रुपये से कम वार्षिक आय वाले परिवारों का चयन करने के लिए घर-घर सर्वेक्षण किया जाता है। 3,500 रुपये तक वार्षिक आय वाले परिवारों को प्राथमिकता दी जाती है जिससे निर्धनतम लोगों को आर्थिक सहायता मिल सके। ज्ञातव्य है कि अब गरीबी रेखा से नीचे का परिवार उसे माना जाता है जिसकी वार्षिक आय 6,400 रुपये तक हो।

कार्यक्रम की उपलब्धियां

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के क्रियान्वयन से ग्रामीण क्षेत्रों में निश्चय ही विकास के नये रास्ते खुले हैं। सीमान्त कृषकों, कृषि मजदूरों, ग्रामीण दस्तकारों सबको रोजगार बढ़ाने, बेरोजगारों को रोजगार सुलभ कराने में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम ने प्रभावी भूमिका निभायी है। गरीबों को आजीविका कमाने के लिए दुधारू पशु से लेकर बैलगाड़ी, सूअर पालन, मुर्गी पालन, मछली पालन, दुकान आदि किसी भी कार्य के लिए इस कार्यक्रम के माध्यम से ऋण व अनुदान उपलब्ध कराया गया है। दर्जी, बढ़ई, लुहार, स्वर्णकार, नाई, मोची, बुनकर, ठठेरा तथा अनुसूचित जातियों, जनजातियों के लोगों व महिलाओं के प्रति इस कार्यक्रम में विशेष ध्यान दिया जा रहा है। ग्रामीण युवकों के लिए स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण योजना तथा ग्रामीण महिलाओं और बच्चों के विकास की योजना भी समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंग के रूप में गांवों के विकास में योगदान कर रही हैं। मुक्त बंधुआ मजदूरों तथा शारीरिक रूप से विकलांगों के लिए सहायता प्रदान करने में कार्यक्रम के अन्तर्गत विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

वर्ष 1989-90 के दौरान सम्पूर्ण देश में 29.9 लाख परिवारों को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम में सहायता देने का लक्ष्य रखा गया। जबकि इस वर्ष के अंत तक 33.51 लाख परिवारों को सहायता प्रदान की गई। जम्मू-कश्मीर व पूर्वांचल के कुछ राज्य छोड़कर उत्तर प्रदेश सहित अन्य सभी राज्यों ने अपने लक्ष्य दिसम्बर, 1990 के अंत तक पूरे कर लिए हैं। लाभार्थी परिवारों में से 45.09 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के हैं तथा 2406 प्रतिशत महिलाओं को सहायता प्रदान की गई। महिलाओं को सहायता देने में 9 राज्य ही अपने लक्ष्य पूरे कर सके हैं। इस दृष्टि से उ. प्र. सहित अन्य राज्य पीछे रहे हैं। उ. प्र. में यह प्रतिशत कम है। 1989-90 वर्ष के लिए समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिए 747.75 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। जबकि वर्ष के अन्त तक 765.42 करोड़ रुपये व्यय हुए। वर्ष 1990-91 के लिए देश में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम में 2371979 परिवारों को लाभान्वित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया जिसमें से जुलाई 1990 तक 299543 परिवार लाभान्वित हो चुके हैं। राष्ट्रीय स्तर पर समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की कुछ वर्षों की प्रगति तालिका-1 में दर्शायी गई है—

तालिका-1

वर्ष	लक्ष्य (लाख) परिवार	उपलब्धि (लाख) परिवार	उपलब्धि (%)	अनुसूचित/जनजाति (%)	महिलाएं (%)	व्यय (करोड़ रु.)	ऋण (करोड़ रु.)
1985-86	24.70	30.61	123.92	43.22	9.89	441.10	730.16
1986-87	35.00	37.47	107.06	44.83	15.13	613.38	1014.88
1987-88	39.64	42.47	107.14	44.71	19.53	727.44	1175.35
1988-89	31.94	37.72	118.09	46.39	23.16	768.44	1231.62
1989-90	29.9	33.51	115.21	45.09	24.06	765.42	122.05

स्रोत : बी. आर. एस. ग्रामीण विकास विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

उत्तर प्रदेश जैसे बड़े राज्य में जहां ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक समस्याएं विद्यमान हैं, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम लक्ष्यों से आगे निकलकर सुखद परिणाम देने में सफल हुआ है। प्रदेश के ग्रामीणों अंचलों में अनुसूचित जातियों, जनजातियों तथा महिलाओं को पर्याप्त राहत मिली है। उनमें अपने पैरों पर खड़े होने की सामर्थ्य उत्पन्न हुई है। वर्ष 1989-90 में उत्तर प्रदेश में समन्वित विकास कार्यक्रम में 573362 परिवारों को सम्मिलित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इसमें 178833 परिवार अनुसूचित जाति तथा 1570 परिवार अनुसूचित जनजाति के शामिल हैं। इनके अतिरिक्त 73985 महिलाएं भी सम्मिलित हैं। प्रदेश में इस वर्ष भी लक्ष्य से अधिक 630000 परिवार लाभान्वित हुए। वर्ष 1990-91 के लिए उत्तर प्रदेश में 468144 परिवारों को लाभान्वित करने का लक्ष्य रखा गया जिसमें से जुलाई, 1990 तक 56952 परिवार लाभान्वित हो चुके हैं।

मूल्यांकन का सुझाव

समय-समय पर भारतीय रिजर्व बैंक, राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक तथा योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन द्वारा किए गए मूल्यांकनों से यह निष्कर्ष सामने आया है कि समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की उपयोगिता तथा इसके अन्तर्गत तैयार की गई नीति में कोई दोष नहीं है। लाभार्थियों पर इसका रचनात्मक प्रभाव पड़ता है। सरकारी आंकड़ों से समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम से सहायता प्राप्त करने वाले कुल लाभार्थियों में 97 प्रतिशत बेसहारा तथा अत्यन्त निर्धन लोग थे जबकि निरीक्षकों द्वारा किए गए वार्षिक आय निरीक्षणों के आधार पर यह प्रतिशत 71 है जो अपने आप में सन्तोषजनक है। लगभग 81 प्रतिशत लाभार्थियों के अनुसार उन्हें मिली सहायता परिसम्पत्ति अर्थात् रोजगार का साधन प्राप्त करने के लिए पर्याप्त थी।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम सैद्धान्तिक दृष्टि से श्रेष्ठ होने के बाद भी व्यावहारिक रूप से वह उतना कारगर सिद्ध नहीं हो रहा है। इसके कुछ मूलभूत कारण है जैसे लाभार्थियों के चयन में त्रुटि होना, कम पूंजी निवेश, ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का अभाव आदि। देखने में आता है कि कार्यक्रम के अन्तर्गत 8 से 10 प्रतिशत ऐसे परिवारों का चयन हो जाता है जिन्हें सहायता पाने की जरूरत नहीं थी। लगभग एक चौथाई मामलों में परिसम्पत्तियों से आय में कोई वृद्धि नहीं होती है।

शिक्षा एवं जनचेतना के अभाव में लोग तात्कालिक लाभ प्राप्त करना चाहते हैं। परिसम्पत्ति के स्थान पर ऋण व अनुदान को वे अपनी इच्छानुसार व्यय करना चाहते हैं। यहां तक कि अनुदान के लालच में ऋण लेने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इस कारण लाभार्थी की आय या उत्पादन क्षमता में वृद्धि नहीं होती जिस कारण उस पर ऋण का बोझ चढ़ जाता है और अनुदान व्यर्थ जाता है। अतः हर हालत में ऋण व अनुदान का उपयोग उत्पादक कार्यों में ही होना चाहिए। ऋणदात्री वित्तीय संस्थाओं में समुचित समन्वय होना चाहिए जिससे दोहरे ऋण की सम्भावना न हो या जरूरतमन्द ऋण से वंचित रह जाएं।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत मिलने वाली पूरी आर्थिक सहायता लाभार्थी को वास्तविक रूप में मिल जानी चाहिए। प्रायः शिकायत रहती है कि अनुदान की अधिकांश राशि परिसम्पत्ति के बढ़े मूल्य के रूप में तथा अन्य तरीकों से येन-केन-प्रकारेण बिचौलिए हथिया लेते हैं। गरीब लाभार्थियों को कार्यक्रम का अपेक्षित लाभ प्राप्त नहीं होता है। इसलिए इस बिन्दु पर निरीक्षण की सबसे अधिक आवश्यकता प्रतीत होती है।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम गांवों की खुशहाली का एक अच्छा उपकरण है। इसका प्रयोग करने वालों के हाथों में इसकी उपयोगी शक्ति निहित है। वे निःस्वार्थ भाव से इस कार्यक्रम में सलंग्न होकर गांवों की काया पलट सकते हैं।

प्रवक्ता, एस. एस. वी. (पो. ग्रे.) कालेज,
"हिमदीप" राधापुरी, हापुड़-245101 (उ. प्र.)

"कुरुक्षेत्र" मंगाने का पता
व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाउस
नई दिल्ली-110001

राजीव गांधी के भाषणों और लेखों पर नई पुस्तकें

चित्र में श्री पी. वी नरसिंह राव भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री राजीव गांधी के चुने हुए भाषणों और लेखों की पुस्तकें 'राजीव गांधीज सलेक्टेड स्पीचेज एंड सलेक्टेड थॉट्स' का लोकार्पण करते हुए

प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिंह राव ने गत 22 अगस्त को नई दिल्ली में अपने निवास पर आयोजित एक समारोह में भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी के चुने हुए भाषणों और लेखों की पुस्तकों ''राजीव गांधीज सलेक्टेड स्पीचेज एण्ड सलेक्टेड थॉट्स'' का लोकार्पण किया। ये दोनों पुस्तकें सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार के प्रकाशन विभाग ने प्रकाशित की हैं।

समारोह में अपने उद्गार व्यक्त करते हुए श्री राव ने अहिंसा और विश्व शांति के लिए श्री राजीव गांधी द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए प्रयासों की सराहना की। प्रधानमंत्री ने कहा कि महात्मा गांधी ने अहिंसा का जो मूल मंत्र हमें दिया था उसे लोग भूलने लगे थे, ऐसे वक्त पर श्री राजीव गांधी ने अहिंसा की विचारधारा को फिर से प्रतिष्ठापित करने के लिए सतत् संघर्ष किया। उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय सोच-विचार, रहन-सहन, अंतर्राष्ट्रीय विचारधारा और अस्तित्व की विचारधारा के क्षेत्र में एक नए मार्ग का सूत्रपात किया।

प्रधानमंत्री ने कहा कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में अहिंसा की आवश्यकता और बढ़ गई है क्योंकि इसका प्रभाव मानव जीवन के प्रत्येक पहलू पर पड़ता है।

दोनों पुस्तकों का उल्लेख करते हुए श्री राव ने कहा कि ये हमारे लिए तथा आगे आने वाली नई पीढ़ी के लिए प्रेरणा स्रोत है। श्री राजीव गांधी के विचार और उनके भाषणों तथा लेखों पर तैयार की गई ये दोनों किताबें हमारा मार्गदर्शन करेंगी।

केन्द्रीय सूचना और प्रसारण मंत्री श्री अजित पांजा ने भी कहा कि श्री राजीव गांधी के विचार वर्तमान तथा भविष्य दोनों ही पीढ़ियों के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। उन्होंने याद किया कि इन पुस्तकों में शामिल अनेक भाषण और विचार तो उन्होंने इसी स्थान पर प्रकट किए जहां आज इन पुस्तकों का लोकार्पण हो रहा है।

सूचना और प्रसारण मंत्रालय की उप-मंत्री डा. गिरिजा व्यास ने प्रधानमंत्री तथा समारोह में उपस्थित अतिथियों का धन्यवाद किया।

इससे पूर्व सूचना और प्रसारण मंत्रालय के सचिव श्री महेश प्रसाद ने प्रकाशन विभाग और उसकी उपलब्धियों के बारे में प्रकाश डाला।

इस अवसर पर लोकसभा अध्यक्ष श्री शिवराज पाटिल, अनेक केन्द्रीय मंत्री, संसद सदस्य, वरिष्ठ पत्रकार और लेखक भी उपस्थित थे।

श्री राजीव गांधी के चुने हुए भाषणों और लेखों का यह पांचवां खंड प्रकाशन विभाग के निदेशक डा. श्याम सिंह शशि की पहल पर रिकार्ड समय में प्रकाशित हुआ है।

मुंशी प्रेमचंद का साहित्य आज भी प्रासंगिक है

मुंशी प्रेमचन्द की 111वीं जयंती के अवसर पर 31 जुलाई को नई दिल्ली में पुस्तक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए केन्द्रीय सूचना और प्रसारण उपमंत्री डॉ. गिरिजा व्यास साथ में हैं प्रकाशन विभाग के निदेशक डॉ. श्याम सिंह शशि

कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद की 111वीं जयंती के अवसर पर गत 31 जुलाई को नई दिल्ली में एक समारोह और पुस्तक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। इस अवसर पर केन्द्रीय सूचना और प्रसारण उप मंत्री डा. गिरिजा व्यास ने कहा कि मुंशी प्रेमचंद का साहित्य वर्षों पुराना होने के बावजूद आज भी प्रासंगिक है। उनके साहित्य में नैतिकता एवं सांस्कृतिक मूल्य स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। समारोह का आयोजन सूचना और प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग और अखिल भारतीय स्वतंत्र पत्रकार एवं लेखक संघ की ओर से संयुक्त रूप से किया गया था।

डा. व्यास ने कहा कि आज जब हमारे समाज में सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का तेजी से पतन हो रहा है, ऐसे में मुंशी प्रेमचंद का साहित्य आज भी प्रेरणादायक है। उन्होंने कहा कि मुंशी प्रेमचंद के साहित्य पर काफी काम हुआ है। लेकिन अपनी रचनाओं में जिन मानवीय और नैतिक मूल्यों की उन्होंने स्थापना की उस पर अभी काम होना बाकी है। डा. व्यास ने प्रेमचंद की कहानियों और उपन्यासों पर दूरदर्शन तथा फिल्म प्रभाग द्वारा छोटी-छोटी फिल्में तैयार करने का भी सुझाव दिया।

प्रकाशन विभाग के निदेशक डा. श्याम सिंह शशि ने कहा कि मुंशी प्रेमचंद ने आम आदमी के दर्द को करीब से देखा और समझा था। उनकी ये भावनाएं उनके लेखन में स्पष्ट परिलक्षित होती हैं।

डा. शशि ने कहा कि मुंशी प्रेमचंद एक अच्छे उपन्यासकार एवं कहानीकार होने के साथ ही अच्छे पत्रकार भी थे। उन्होंने अनेक कठिनाइयां उठाकर "हंस" पत्रिका का प्रकाशन किया।

मुंशी प्रेमचंद के साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के कला संकाय के डीन तथा हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डा. महेश चन्द्र गुप्त ने कहा कि प्रेमचंद ने केवल स्वांत: सुखाय के लिए नहीं लिखा। उन्होंने अपने लेखन से परतंत्र को एक नई दिशा दी। डा. गुप्त ने कहा कि हिन्दी साहित्य में जैसे तुलसीदास लोकमंगल वाली दृष्टि के लिए प्रसिद्ध हैं वैसे ही प्रेमचंद का योगदान उनसे कम नहीं है। प्रेमचंद ने अपनी लेखनी के माध्यम से सामाजिक और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में जागरण की एक लहर पैदा की।

डा. कमल किशोर गोयनका ने बताया कि प्रेमचंद पर अनुसंधान करते समय उन्हें कई नई जानकारियां मिलीं। प्रेमचंद इकबाल के भक्त थे। उन्होंने जो कुछ लिखा उससे न केवल इस काल में वरन् कालों में भी वे जीवित रहेंगे।

समारोह को डा. प्रशांत वेदालंकार और दूरदर्शन के अतिरिक्त निदेशक (समाचार) श्री सीताराम खोड़ावाल और अ.भा. स्वतंत्र पत्रकार एवं लेखक संघ के महासचिव श्री दयानंद वत्स ने भी संबोधित किया।

प्रेमचंद साहित्य पर विशेष कार्य के लिए इस अवसर पर श्री सीताराम खोड़ावाल, डा. कमल किशोर गोयनका और श्री मनोहर बंधोपाध्याय को सम्मानित भी किया गया। मनोहर बंधोपाध्याय समारोह में उपस्थित न हो सके। सभा के अंत में प्रकाशन विभाग के संयुक्त निदेशक श्री पी.एन. कौल ने अतिथियों का धन्यवाद किया।

प्रेमचंद जयन्ती समारोह के अवसर पर बीच में केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण उपमंत्री डॉ. गिरिजा व्यास और प्रकाशन विभाग के निदेशक डॉ. श्याम सिंह शशि

नया केन्द्रीय बजट : अर्थव्यवस्था में सुधार के व्यावहारिक उपाय

ओम प्रकाश दत्त

राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पिछले कुछ वर्षों से जिस तरह बिगड़ती गई है, उसका प्रभाव देश में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ा है। बढ़ती महंगाई, बेरोजगारी, भुगतान संतुलन की नाजुक स्थिति, राजकोषीय असंतुलन, निर्यात में गिरावट ने हमारी अर्थव्यवस्था को संकट में डाल दिया है। केन्द्रीय वित्त मंत्री व सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री डाक्टर मनमोहन सिंह ने वर्ष 1991-92 के बजट में इस स्थिति को सुधारने के लिए व्यावहारिक कदम उठाए हैं। उन्होंने कहा है कि सरकार का लक्ष्य राजस्व तथा राजकोषीय घाटे को काम करना तथा भुगतान संतुलन की स्थिति को सुधारने का है। उनका कहना है कि आर्थिक नीति और आर्थिक प्रबन्ध में सुधार करके, बरबादी और अकुशलता को समाप्त करके हम अर्थव्यवस्था को गतिशील बनाएंगे जिससे यह समुचित मूल्य स्थिरता और अधिक सामाजिक समानता के साथ फिर विकासशील बने।

वित्त मंत्री ने कहा कि देश के सामने उपस्थित गंभीर आर्थिक संकट से निपटने के लिए दृढ़ कार्यवाही की आवश्यकता है और हम विकास के लिए साधन उन लोगों से जुटाएंगे जो उसके लिए सक्षम हैं। इसी दृष्टि से बजट में आयकर व धन कर में कोई राहत नहीं दी गई है और विलासिता वाली चीजों जैसे कार, फ्रिज, रंगीन टेलीविजन, वी. सी. आर., सिगरेट, शराब, एयर कंडीशनर, पान मसाला पर अतिरिक्त कर लगा दिया गया है। महंगे रेस्तराओं में खाने पर भी अब कर लगेगा। लेकिन घरों में इस्तेमाल होने वाले अल्यूमीनियम, तांबे व स्टेनलैस स्टील के बर्तनों, कांच के सामान, बिजली के सभी बल्बों, खाने के तेल, मिट्टी के तेल जैसी चीजों पर करों में छूट देकर उन्हें सस्ता कर दिया गया है। हल्के दुपहिया वाहन भी सस्ते कर दिए गए हैं। साधारण श्याम-श्वेत टेलीविजन पर कोई कर नहीं लगा है।

अर्थव्यवस्था को संकट से निकालने के लिए वित्त मंत्री को कुछ अन्य उपाय भी करने पड़े हैं। रसोई गैस और पैट्रोल के दाम बीस प्रतिशत बढ़ाए गए हैं ताकि इसके आयात का बोझ कम हो और इसकी आवश्यक खपत पर अंकुश लगे लेकिन डीजल पर कोई कर नहीं लगाया है जिससे किसानों को राहत होगी। वित्त मंत्री ने सरकारी खर्च को कम करने और आर्थिक मदद के नाम पर दी जाने वाली रकम को घटाने के लिए दो उपायोंकी घोषणा की। किसानों को सस्ती दर पर दी जाने वाली खाद पर से मूल्य नियंत्रण हटाने की घोषणा की और खादों के दाम 40 प्रतिशत बढ़ा दिए। खाद के दाम पिछले दस वर्षों में कभी नहीं बढ़ाए गए। उर्वरकों पर इस समय 60 अरब रुपये की सब्सिडी दी जा रही है। सुपर फास्फेट के कारखानों को दी जाने वाली प्रति टन की अधिकतम सहायता राशि की सीमा तय करने और फिर धीरे-धीरे बंद करने की घोषणा की गई ताकि ये अपनी क्षमता बढ़ाने के लिए स्वयं प्रेरित हों। इससे किसानों को खाद महंगी मिलती लेकिन इस नुकसान को पूरा करने के लिए वित्त मंत्री ने आश्वासन दिया कि किसानों से अनाज और अन्य फसलों के खरीद मूल्यों में उचित वृद्धि की जाएगी ताकि किसानों को उनकी उपज का लाभकारी मूल्य मिले। खाद की कीमतों में वृद्धि के फलस्वरूप कृषि उत्पादन में किसी संभावित कमी या खपत में कमी को रोकने के लिए ऋण संबंधी ढांचे को सुदृढ़ करने की घोषणा की गई ताकि छोटे व सीमान्त किसानों को पर्याप्त ऋण सुविधा सुनिश्चित हो। इसके अलावा देश भर में मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं व कृषि परामर्श सेवाओं को मजबूत किया जाएगा ताकि खाद का प्रभावी उपयोग सुनिश्चित हो व जैव-उर्वरकों को लोकप्रिय बनाया जा सके। लेकिन बाद में लोकसभा में बजट पर हुई चर्चा का उत्तर देते समय डा. मनमोहन सिंह ने उर्वरकों की कीमतों में प्रस्तावित चालीस प्रतिशत की वृद्धि को घटाकर तीस प्रतिशत करने की घोषणा की तथा कहा कि छोटे व सीमांत किसानों को इस मूल्य वृद्धि से पूरी तरह मुक्त कर दिया गया है। उन्होंने बताया कि छोटे व सीमांत किसानों को उर्वरक उपलब्ध कराने के लिए दिशा-निर्देश तैयार किए जा रहे हैं। इस काम में राज्य सरकारों की सलाह भी ली जाएगी। सरकार के इस निर्णय से अब उर्वरकों की बिक्री के लिए दोहरी मूल्य नीति लागू होगी। बड़े व साधन सम्पन्न किसानों को ही खाद की अधिक कीमत देनी पड़ेगी। देश में छोटे व सीमांत किसानों की संख्या 67 प्रतिशत से अधिक है। उनके पास 76.3 प्रतिशत जोतें हैं जो कुल कृषि भूमि का केवल 28 प्रतिशत है और खाद की देश में कुल खपत में से वे केवल तीस प्रतिशत का ही उपयोग करते हैं। वित्तमंत्री

ने कहा कि कृषि क्षेत्र को सरकार हर संभव सुविधा देगी क्योंकि अनाज उत्पादन में वृद्धि हमारा महत्वपूर्ण लक्ष्य है। उनका कहना था कि खाद पर सब्सिडी खत्म करके सरकार को 18 अरब रुपये जुटाने की आशा थी लेकिन अब छोटे किसानों को छूट की घोषणा से यह राशि साढ़े चार अरब रुपये कम हो जाएगी। उन्होंने बताया कि वर्ष 1991-92 के बजट में पहले 77 अरब 19 करोड़ रुपये के घाटे का अनुमान था लेकिन खाद मूल्य में राहत की घोषणा से यह 8 से 9 अरब रुपये के बीच बढ़ने का अनुमान है और करीब 85 अरब 74 करोड़ रु. तक पहुंच जाने की संभावना है।

सरकारी आर्थिक मदद की राशि में कमी करने के लिए राशन की चीनी की कीमत भी 85 पैसे प्रति किलोग्राम बढ़ाई गई है। अब यह छः रुपये 10 पैसे प्रति किलो की दर से मिलने लगी है। आर्थिक संकट से निपटने के लिए सरकारी खर्च को कम करने के उद्देश्य से निर्यात प्रोत्साहन के लिए आर्थिक सहायता में भी 30 अरब रुपये की कटौती की गई है जो कि अब अन्य विकास कार्यों पर लगाई जा सकेगी। लेकिन आम लोगों को खाने का सामान उचित कीमत पर मिलता रहे इसके लिए अनाज पर दी जाने वाली आर्थिक सहायता की राशि पिछले वर्ष के 24 अरब 50 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 26 अरब रुपये कर दी गई है। खांडसारी पर अतिरिक्त शुल्क नहीं लगा है लेकिन शीरे पर उत्पादन शुल्क बढ़ाकर 150 रुपये प्रति टन कर दिया गया है।

धूम्रपान की आदत को निरुत्साहित करने के लिए सिगरेटों, ब्रांड वाली बीड़ियों, पेपर रोल्ड बीड़ियों और पान-मसालों पर कर बढ़ा दिया गया है लेकिन अन्य हस्त-निर्मित बीड़ी पर कर नहीं लगा है। पहले सभी चीजों पर मूल उत्पाद शुल्क के अलावा पांच प्रतिशत विशेष उत्पाद शुल्क लगता था। उसे बढ़ाकर अब दस प्रतिशत किया गया है ताकि अतिरिक्त संसाधन जुटाए जा सकें। लेकिन चाय, काफी, माचिस, वनस्पति, चीनी, मिट्टी के तेल जैसी आम इस्तेमाल की चीजों पर यह विशेष उत्पाद शुल्क नहीं लगेगा और न ही यह शुल्क डीजल और दुपहिया वाहनों पर लगेगा। वित्त मंत्री ने कहा कि सार्वजनिक वितरण की प्रणाली को मजबूत बनाया जा रहा है ताकि कमजोर वर्गों विशेषकर गांवों में निर्धनों की चावल, गेहूं और अन्य खाद्यान्नों की आवश्यकता विशेष रूप से पूरी हो सके और यह व्यवस्था अधिक उपयोगी ढंग से चल सके।

कृषि विकास

कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की सरकार की नीति को बजट में कायम रखा गया है। वित्तमंत्री ने घोषणा की कि

महंगे	सस्ते
चीनी	बिजली के बल्ब
सिगरेट, बीड़ी, पान मसाला	साईकल
शीरा	खाद्य तेल, जूस
खाद	मिट्टी का तेल
रसोई गैस	मछली जाल
पेट्रोल	मक्खन,
रेफ्रीजरेटर	पनीर, मछली उत्पादन
कार, कारों के हिस्से-पुर्जे	चाय, डिब्बाबंद फल,
रंगीन टेलीविजन	काफी, सुखाई सब्जी
कैसेट	दुपहिया वाहन
एयर कंडीशनर	कीटनाशक
वी. सी. आर., वी. सी. पी.	खांडसारी
	साहसिक खेल उपकरण
	अल्युमीनियम की खिड़की, दरवाजे, फ्रेम
	मिर्गी रोग की पांच दवाएं
	मानक अखबारी कागज

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विविधता लाने व ग्रामीण औद्योगीकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से खाद्य संसाधन व कृषि-आधारित अन्य उद्योगों को बड़े पैमाने पर प्रोत्साहित किया जाएगा। इसके लिए एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में कृषि आधारित उत्पादों जैसे चटनी, अचार, मुरब्बा, मक्खन, पनीर, वनस्पति तेल, फलरस, डिब्बाबन्द फल, सुखायी गई सब्जियां, कुछ सोया उत्पाद, स्टार्च, मांस, मछली के उत्पादों से उत्पाद शुल्क से पूरी तरह हटा लिया गया है। कृषि आधारित पटसन उद्योग को राहत के रूप में अब उन उत्पादों पर उत्पाद शुल्क 660 रुपये से घटाकर आधा कर दिया गया है जिनमें कम से कम 35 प्रतिशत पटसन रेशा होगा।

वित्त मंत्री ने कहा कि योजना की 50 प्रतिशत राशि कृषि व ग्रामीण क्षेत्र में खर्च करने का कार्यक्रम जारी रहेगा। छोटे व सीमान्त किसानों के लिए कुएं खोदने व कम गहरे नलकूपों के लिए सहायता दोगुनी की जा रही है। दुर्गम क्षेत्रों में सहायता की अब कोई अधिकतम सीमा नहीं होगी। तिलहनों तथा दालों के उत्पादन के लिए सहायता में पर्याप्त वृद्धि की जाएगी। छोटे ट्रैक्टर, अन्य कृषि उपकरणों, पानी की कमी वाले इलाकों में ड्रिप व स्प्रिंकलर सिंचाई तथा कम उपज वाले क्षेत्रों में अच्छी किस्म के बीजों का उपयोग बढ़ाने के लिए नई योजनाएं शुरू की जा रही हैं। इस खरीफ मौसम में एक अन्य योजना चलाई

जा रही है। इसके अंतर्गत राज्य सरकारों, सहकारी समितियों, किसानों के समूहों को कम शुल्क पर कपास व अन्य दालों की फसल वाले बड़े क्षेत्रों में मुक्त पौध संरक्षण प्रदान किया जाएगा।

ग्रामोद्योगों को प्राथमिकता

लघु, खादी व ग्रामोद्योगों को विशेष प्राथमिकता देने की नीति के अंतर्गत इन्हें उत्पाद शुल्क में कुछ नई रियायतें दी गई हैं। पंजीकृत सहकारी समितियों, महिला समितियों, खादी व ग्रामोद्योग आयोग से मान्यता प्राप्त संस्थाओं को ग्रामीण क्षेत्र में बनने वाली विशेष वस्तुओं पर उपलब्ध उत्पादन शुल्क से पूरी छूट, धुलाई के साबुन (सिंथेटिक डिटरजेंट) पर भी मिलेगी। इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्रों में इन संस्थाओं द्वारा निर्मित जूते पर छूट की मूल्य सीमा 100 रुपये से बढ़ाकर 150 रुपये प्रति जोड़ा कर दी गई है।

जलापूर्ति

त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम पर इस वर्ष 7 अरब 58 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे। इस साल एक जोरदार कार्यक्रम पानी के साधनों के अभाव वाले 1,61,722 गांवों में चलाया जाएगा। मार्च 1992 तक 1,58,367 गांवों को और फिर 1993 तक बाकी 3355 गांवों को शामिल किया जाएगा।

ग्रामीण विद्युतीकरण

देश में कुल 5,79,132 गांवों में से 4,88,514 गांवों में मार्च, 1992 तक बिजली पहुंचा दिए जाने की आशा है। चालू वित्त वर्ष 1991-92 में ही 7462 गांवों में बिजली मिलने लगेगी व 3,10,350 पंपसेटों को भी बिजली सप्लाई होने लगेगी।

गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के लिए इस वर्ष बजट में 376 करोड़ रुपये रखे गए हैं व वर्ष 1991-92 में गरीबी रेखा से नीचे रह रहे 22 लाख 54 हजार ग्रामीण परिवारों को सहायता प्रदान की जाएगी। इनमें से आधे लाभार्थी अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के होंगे तथा 40 प्रतिशत महिलाएं होंगी।

रोजगार

ग्रामीण रोजगार के लिए नए बजट में 2100 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इसके अंतर्गत जवाहर रोजगार योजना में चालू वित्त वर्ष में 8988.5 लाख कार्य दिवसों का सृजन किया जाएगा। निर्धारित परिव्यय में से 20 प्रतिशत खर्च कुओं के निर्माण, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों व मुक्त कराए गए बंधुवा मजदूरों के लिए भूमि विकास पर किया जाएगा।

केन्द्रीय आयोजना में ग्रामीण विकास के प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध मंत्रालय/विभागवार परिव्यय

कृषि (समग्र)	1990-91	1991-92 अनुमानित
	1392	1858
कृषि	787	1014
कृषि अनुसंधान, शिक्षा	155	190
पशु पालन, डेयरी	86	158
उर्वरक	585	411
सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण	186	267
नागरिक आपूर्ति, सार्वजनिक वितरण	13	18
पर्यावरण, वन	211	300
खाद्य	58	76
खाद्य संसाधन उद्योग	31	43
युवा कार्य, खेल	62	76
स्वास्थ्य	255	302
परिवार कल्याण	785	749
शिक्षा	838	977
महिला, बाल विकास	313	400
लघु उद्योग, कृषि व ग्रामीण उद्योग	307	360
ग्रामीण विकास (समग्र)	2961	3508
बिजली	4112	4869
ऊर्जा के गैर-पारंपरिक स्रोत	116	150
डाक सेवाएं	48	72
जल संसाधन	194	275
भूतल परिवहन	1482	1790
कल्याण	366	479
रेलवे	4916	5325

त्वरित ग्रामीण जलपूर्ति कार्यक्रम	758 करोड़ रुपये
एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम	376 करोड़ रुपये
ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम	2100 करोड़ रुपये
डाक सेवाएं	72 करोड़ रुपये

(वर्ष 1991-92 में कुल 1540 डाकघर खोले जाएंगे। इनमें से 1260 ग्रामीण अंचल में व 140 जनजातीय क्षेत्रों में होंगे।)

परिवार कल्याण	749 करोड़ रुपये

(अगले दस वर्षों में जन्म दर 21 प्रति हजार व मृत्यु दर को 9 प्रति हजार तक लाने का लक्ष्य)

महिला व बाल विकास 400 करोड़ रुपये

(1990-91 की तुलना में 1991-92 में 21 प्रतिशत अधिक परिव्यय), (1991-92 में 875 नई एकीकृत बाल विकास सेवा परियोजनाएं आरंभ की जाएंगी) कुल बजट प्रावधान (1991-92)

42969 करोड़ रुपये
(1990-91)
39329 करोड़ रुपये
(पिछले वर्ष की तुलना में इस वर्ष 79 प्रतिशत अधिक परिव्यय)

अप्रत्यक्ष रोजगार अवसर

साबुन बनाने के लिए गौण तेलों के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए एक धन क्रेडिट योजना पहले से लागू है। साबुन उत्पादन में इस्तेमाल होने वाले चावल की भूसी के तेल पर उपलब्ध 640 रुपये प्रति टन के दान क्रेडिट को बढ़ाकर अब 1000 रुपये टन कर दिया गया है। अब इस योजना में अब कुछ अन्य गैर-परंपरागत तेल व विलायक निस्सारित तेल भी शामिल किए गए हैं। इससे वन क्षेत्रों में जनजातीय स्त्रियों को रोजगार के अधिक अवसर मिल सकेंगे।

वित्तमंत्री ने इस बात पर चिंता प्रकट की कि आजादी के 44 वर्षों बाद भी देश में मनुष्यों द्वारा मैला ढोने की अमानवीय प्रथा अभी समाप्त नहीं हुई है। इसके लिए विभिन्न योजनाओं में खर्च निर्धारण के बावजूद स्थिति में विशेष सुधार नहीं आया है। अब निर्णय लिया गया है कि न केवल शुष्क शौचालयों को बदलने के कार्यक्रम में तेजी लाई जाए बल्कि सफाई कर्मचारियों के पुनर्वास व उनके पुनः प्रशिक्षण के लिए अधिक राशि आबंटित की जाए। अतः इस वर्ष इस कार्यक्रम पर 25 करोड़ रुपये अधिक खर्च किए जाएंगे तथा आवश्यकता पड़ने पर वर्ष के दौरान और अधिक राशि की व्यवस्था की जाएगी।

विदेशी मुद्रा व काला धन

कठिन आर्थिक स्थिति से निपटने के लिए सरकार को आर्थिक संसाधनों का पूरा दोहन करना अनिवार्य है। करों के अलावा इस काम के लिए विदेशी मुद्रा आकर्षित करने व काला धन बाहर निकालने की ओर सरकार ने विशेष ध्यान दिया है तथा इस संबंध में वित्त मंत्री ने नए उपायों की घोषणा अपने बजट में की।

विदेशी मुद्रा आकर्षित करने के लिए वित्त मंत्री ने दो नई योजनाओं की घोषणा की। पहली योजना के अंतर्गत विदेशी मुद्रा के रूप में राशि भारत में रहने वाले किसी व्यक्ति को भेजी जा सकती है। यदि यह राशि उपहार-स्वरूप है तो इस पर उपहार कर नहीं लगेगा और न ही इसके स्रोतों की जांच-पड़ताल की जाएगी। यह योजना तत्काल लागू हो चुकी है व 30 नवंबर, 1991 तक लागू रहेगी।

दूसरी योजना के अंतर्गत भारतीय स्टेट बैंक भारत विकास बांड जारी करेगा जिनका मूल्य अमरीकी डालर में होगा। इन बांडों को विदेशों में रहने वाले भारतीय और विदेशों में उनकी कंपनियां खरीद सकेंगी। ये बांड पांच वर्ष के लिए होंगे और इन्हें किसी भी सीमा तक खरीदा जा सकेगा। इनके खरीदार इन्हें आपस में बेच सकेंगे। इन बांडों से ब्याज पर आयकर नहीं लगेगा तथा परिपक्वता की अवधि तक ये धन कर से भी मुक्त रहेंगे। ये बांड भारत में रह रहे किसी व्यक्ति को उपहार-स्वरूप भी दिए जा सकते हैं व इन पर उपहार कर नहीं लगेगा। ये बांड विदेशों में स्टेट बैंक आफ इंडिया की शाखाओं में 30 नवंबर, 1991 तक उपलब्ध होंगे।

कालाधन

काला धन बाहर निकालने के लिए भी एक नई योजना की घोषणा की गई है और इससे प्राप्त धन का इस्तेमाल निर्धनों के लिए मकान बनाने में किया जाएगा। इसके अंतर्गत कोई भी व्यक्ति 30 नवंबर, 1991 तक राष्ट्रीय आवास बैंक के खाते में धन जमा करा सकता है। इनमें इस धन के स्रोतों के बारे में कोई पूछताछ नहीं की जाएगी। जमा राशि में से 40 प्रतिशत राशि का उपयोग सरकार झोंपड़-पट्टियों का सुधार करने व निर्धन लोगों के लिए सस्ते मकान बनाने में करेगी।

जमाकर्ता को शेष 60 प्रतिशत राशि अपने लिए चैक द्वारा निकालने की छूट होगी। इस जमा राशि के लिए अवधि की कोई सीमा नहीं है।

सामाजिक-साम्प्रदायिक कल्याण के पांच नए उपाय

वित्त मंत्री ने अपने बजट में पांच ऐसे नए उपायों की घोषणा की जिससे अन्य बातों के अलावा पिछड़े वर्गों को राहत मिलेगी और साम्प्रदायिक दंगों से प्रभावित परिवारों को सहारा मिल सकेगा।

पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए एक निगम बनाया जाएगा और इसकी घोषणा जल्दी ही कर दी जाएगी।

(शेष पृष्ठ 38 पर)

ऊसर भूमि का सुधार एवं विधियां

डॉ. (कु.) पुष्पा अग्रवाल

भारत की अमूल्य निधि और धरोहर का दोहन प्राचीन काल से ही हो रहा है। प्रारम्भ में मानव और प्रकृति दोनों में पूर्ण तालमेल तो था ही, सम्यक संतुलन भी था। किन्तु जैसे-जैसे मानव, सभ्यता की सीढ़ियां चढ़ता गया, संतुलन के तंतु चटखते गए। परिणामतया विभिन्न प्रकार के अभावों और विकृतियों ने जन्म लेना प्रारम्भ कर दिया। बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं के दबाव और प्रौद्योगिकी के विकास की गति ने आज बंजर भूमि की लम्बी कतारें ऊगा दी हैं। आज भारत में लगभग 120 लाख हैक्टेयर भूमि ऊसर (लवणता या क्षारीयता से प्रभावित है) जो कुल भौगोलिक क्षेत्र (3280 लाख हैक्टेयर क्षेत्र) का एक महत्वपूर्ण भाग है।

'ऊसर' शब्द वास्तव में संस्कृत के 'उष्ट्र' शब्द से बना है। कृषि के लिए अनुपयुक्त भूमि के लिए इस शब्द का प्रयोग किया जाता था। इसकी परिसीमा में शुष्क जलवायु से प्रभावित भू-भाग के अतिरिक्त लवण या क्षार से प्रभावित भू-भाग भी समाविष्ट था। ऊसर के अतिरिक्त इस प्रकार की भूमि के लिए 'रेह', 'रहेला', 'कल्लर', 'बंजर', 'थूर', 'सेम' (पंजाब में), 'रक्कर', 'बारा', 'बारी' (बहुत खराब होने पर), 'लूनी', 'खारी', 'खार', (राजस्थान में), 'लोना', 'क्षार' या 'शोरा' (बिहार में), 'चौपान', 'काटक', 'साऊदू' (दक्षिण भारत में) आदि का प्रयोग किया जाता है।

पश्चिमी यमुना नहर द्वारा सिंचित भूमि में निरन्तर बढ़ती खराबी का आभास सबसे पहले 1858 में हुआ था। तभी से इसके विभिन्न प्रकारों की पहचान और निदान के प्रयास चालू हैं।

लवणीय और क्षारीय मिट्टियां निम्न वर्गों में वर्गीकृत की गई हैं:

बंजर तथा कृषि के लिए अनुपयुक्त क्षेत्र, स्थायी चरागाह तथा अन्य चराई भूमि, कृषि बंजर भूमि, वन वृक्ष लगाने योग्य भूमि, शुद्ध बोया क्षेत्र, परती भूमि।

किस वर्ग या उपवर्ग में कितनी लवणीय या क्षारीय भूमि है—इसके सही आंकड़े नहीं मिलते हैं। फिर भी यह स्पष्ट है कि लवण प्रभावित भूमि के सुधार से अनाज की कमी को काफी सीमा तक पूरा किया जा सकेगा। सुधार की प्रमुख विधियों का विवरण नीचे दिया गया है।

यांत्रिक और भौतिक विधियां

प्रारम्भ में ऊसर मिट्टी की भौतिक दशा को सुधारने के लिए, गहरी जुताई, अपवर्तन (जड़ क्षेत्र से नीचे की अवमृदा का सतह की मिट्टी के साथ उलट-पुलट करना), मृदा सुधारकों का प्रयोग, मृदा क्षेत्र में उपस्थित कठोर परत अथवा चट्टानी तहों को तोड़ना—जैसी यांत्रिक विधियों का उपयोग किया जाता रहा है। कठोर परतों को तोड़ देने से मिट्टी में जल का संचार संतोषजनक होता है इन्हें शक्तिशाली ट्रैक्टरों और छेनियों द्वारा तोड़ा जा सकता है। इस प्रकार के प्रयोग 130 हार्स पावर या 150 हार्स पावर के ट्रैक्टरों के साथ किलेफर मॉडल 35 पान ब्रेशर लगाकर किए गए हैं। अवमृदा के कैल्शियम कार्बोनेट युक्त होने पर, सतही मिट्टी के साथ जोत देने से भी ऊसर मिट्टी में सुधार हो जाता है, भारी मात्रा में गोबर की खाद का प्रयोग भी लाभदायक रहता है।

गहरी जुताई द्वारा कैल्शियम कार्बोनेट लवणों की मात्रा जड़ क्षेत्र में बढ़ जाती है तथा सोडियम लवणों की मात्रा कम हो जाती है। यदि कैल्शियम कार्बोनेट और कैल्शियम सल्फेट निचली गहराइयों पर स्थित है, तो गहरी जुताई द्वारा, क्षारीय, मृदाओं को 'स्वयं सुधार विधि' द्वारा सुधारा जा सकता है तथा इस उपयोग में लिए जाने वाली जिप्सम की विशाल मात्रा को बचाया जा सकता है। रेत के उपचार से कुछ विशेष परिस्थितियों में ही लाभदायक प्रभाव की आशा की जा सकती है।

रासायनिक विधियां

रासायनिक सुधारकों का उपयोग, मुख्य रूप से, ऊसर मिट्टियों को सुधारने के लिए किया जाता है। ये सुधारक उच्च पी-एच को उदासीन बनाते हैं, स्वतंत्र अवस्था में उपस्थित सोडियम कार्बोनेट से अभिक्रिया करते हैं तथा कैल्शियम के द्वारा सोडियम को प्रतिस्थापित करते हैं। प्राकृतिक अवस्था में, क्षारीय मिट्टियों में उच्च पी-एच के कारण इसकी घुलनशीलता नाम मात्र की होती है। यह जल में न्यूनतम

घुलनशील है तथा इसकी घुलनशीलता, मिट्टी में कार्बन डाई-आक्साइड की मात्रा बढ़ाने से तथा पी-एच को कम करके बढ़ाई जा सकती है।

क्षारीय मिट्टियों के सुधार के लिए जिप्सम सस्ता तथा सुलभ रासायनिक सुधारक है। भारत में इसका उपयोग लगभग एक सदी पहले से हो रहा है। एक एकड़ क्षारीय भूमि को सुधारने के लिए 9-10 टन जिप्सम की आवश्यकता पड़ती है। पहले जिप्सम की कीमत 20 रुपये प्रति टन थी। अत: इसका प्रयोग करने में किसानों को कठिनाई नहीं होती थी। जिप्सम महीन होना चाहिए तथा मिट्टी की सतह पर ही डालना चाहिए। प्रारम्भ में मिट्टी के बारे में बहुत कम जानकारी थी। धनायन-विनियम सिद्धांतों की खोज नहीं हुई थी और न ही जिप्सम की वांछित आवश्यक मात्रा निर्धारण करने की विधि का ज्ञान था। जिप्सम के अतिरिक्त, पाइराइटीज तथा सल्फ्यूरिक अम्ल का भी उपयोग ऊसर भूमि को सुधारने के लिए किया जा सकता है। सल्फ्यूरिक अम्ल अत्यंत ही सफल रासायनिक सुधारक है, लेकिन भारत में सस्ता और सरलता से सुलभ नहीं होने के कारण तथा इसके प्रयोग में अधिक सावधानी रखने के कारण इसका उपयोग बड़े पैमाने पर नहीं हो पा रहा है।

जिप्सम का उपयोग गोबर की खाद के साथ करने से बरसीम, गन्ना तथा धान की उपज में वृद्धि होती है। ऊसर मिट्टी के उपचार के लिए, जिप्सम की कितनी मात्रा की आवश्यकता होती है, यह स्वाभाविक रूप से इस पर निर्भर करता है कि मिट्टी में प्रारंभ में विनिमय-योग्य सोडियम की कितनी मात्रा है तथा उसे किस स्तर तक घटाना है। जिप्सम की आवश्यकता प्रयोगशाला में 0-15 सें. मी. गहराई तक मिट्टी की जांच के आधार पर तय की जाती है। स्वाभाविक है कि अगर उसी मात्रा को 30 से.मी. गहरी मिट्टी की बजाय 10 सें.मी. गहरी मिट्टी में मिलाया जाय तो अधिक लाभ होगा तथा फसलों की उपज संतोषजनक मिलेगी। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि जहां सिंचाई के लिए उच्च कोटि का जल उपलब्ध हो, वर्षा संतोषजनक तथा प्रभावशील होती हो, मिट्टी में कंकर उपस्थित हो और नाइट्रोजन उर्वरकों का उचित मात्रा में उपयोग हो तो वहां जिप्सम की अल्प मात्रा (जिप्सम आवश्यकता की 25 प्रतिशत मात्रा) द्वारा ऊसर मिट्टी का भली-भांति सुधार किया जा सकता है। सुधार में वर्ष-प्रति वर्ष निरन्तर प्रगति होती रहती है। जिप्सम का उपयोग करने के लिए मिट्टी का नमूना, खेत में सिंचाई करने के बाद लेना चाहिए, नहीं तो असंयुक्त रूप में उपस्थित सोडियम कार्बोनेट के कारण पी-एच का मान अधिक आएगा और इसके कारण आवश्यक जिप्सम की मात्रा भी फालतू तय हो जाएगी।

फॉस्फोजिप्सम के अतिरिक्त, कुछ कारखानों से छीजन के रूप में ऐसा जिप्सम प्राप्त होता है, जिसमें बोरोन की आवांछित मात्रा होती है। इस प्रकार के जिप्सम के उपयोग से पौधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है क्योंकि बोरोन विषैला तत्व है और यदि यह बहुत कम मात्रा से अधिक हो तो पौधों पर विषकारक प्रभाव डालता है। ऊसर मिट्टी को सुधारने के लिए उपयोग में लिया गया जिप्सम कुछ विषैले तत्व जैसे बोरोन या फ्लोरीन की अवांछित मात्राओं से मुक्त हो अन्यथा सुधार के साथ-साथ हानि भी होने की सम्भावना हो सकती है। पाइराइट एक खनिज है, जिसमें लोहा तथा गंधक मुख्य रूप से पाए जाते हैं। इसका रासायनिक संघटन प्रतिक्रियात्मक होता है। भारत में पाइराइट को खानों से निकालने का कार्य तथा इसका व्यापारिक उपयोग, पाइराइट फास्फेट कैमीकल्स लिमिटेड द्वारा किया जाता है। निम्न श्रेणी के पाइराइट का उपयोग कृषि क्षेत्र में किए जाने की संस्तुति की जाती है। इसे 'कृषि श्रेणी' पाइराइट कहा जाता है। ऊसर मिट्टी (पी-एच 10.2-10.65, विनियम योग्य सोडा 65-86 प्रतिशत, स्वतंत्र अवस्था में कैल्शियम कार्बोनेट 2.91-9.49 प्रतिशत) की सतह पर पाइराइट का 21 दिन तक उपचार करके तथा उसके बाद 21 दिन तक पानी भर देने से मिट्टी में बहुत सुधार होता है। गंधक का अम्ल, ऊसर मिट्टी के साथ तीव्रता से अभिक्रिया करता है तथा अल्प समय में क्षारीय मिट्टी को पूरी तरह सुधार देता है। किन्तु भारत में गंधक के अम्ल की वांछित मात्रा में अनुपलब्धि, बड़े पैमाने पर उपचार के लिए मशीनों का अभाव आदि कुछ ऐसे कारण हैं, जिनके कारण गंधक के अम्ल का बड़े पैमाने पर उपयोग निकट भविष्य में संभव नहीं है।

जल-निकास की प्रणालियां

अनुकूलतम कृषि उत्पादन के लिए खेत में से मिट्टी की सतह पर या अवमृदा में उपस्थित आवश्यकता से अधिक जल की मात्रा को दूर करने की रीति को जल-निकास कहते हैं। जल-निकास की विधियों द्वारा, क्षारीय और लवणीय मृदाओं की सतह पर या सतह से नीचे पौधे के जड़-क्षेत्रों में अतिरिक्त मात्रा में उपस्थित जल को कम किया जा सकता है। मिट्टी में उचित जल निकास की व्यवस्था करना, विशेष रूप से लवणीय या क्षारीय अथवा जलमग्न मिट्टियों में अत्यंत महत्वपूर्ण है। जल निकास के बिना भूमि सुधार के अंतर्गत लवणों का निक्षालन भी समुचित रूप से नहीं हो पाता है। खेतों में से या अन्य क्षेत्रों में से अतिरिक्त जल को दूर करना आवश्यक है। पंक्तियों में लगाई जाने वाली फसलों में प्रत्येक पंक्ति में से अतिरिक्त जल निकल कर आ जाना चाहिए। पंक्तियों में एकत्रित जल बिना रुके सीधा बाहर खेत की नाली में पहुंच जाना चाहिए। अगर खेत में अनाज, घास या चारे की फसल है

और मिट्टी की सतह चिकनी है, तो जल सामान्य बहना चाहिए तथा कहीं भी बीच में स्थित खेत की नाली में नहीं रुकना चाहिए। एकत्रीकरण नालियां इस प्रकार बनी होनी चाहिए कि उनमें जल बिना किसी रुकावट के इकट्ठा हो जाए तथा मिट्टी का कटाव न हो। अतिरिक्त जल एक निश्चित समय में दूर हो जाना चाहिए। मृदा प्रोफाइल संतृप्त हो और फसल को हानि पहुंचे, इसके पहले ही अतिरिक्त जल को दूर कर देना चाहिए।

मिट्टी में लवणता के नियंत्रण की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए। यह लवणों के निक्षालन के लिए उन्नत अवसर प्रदान करके संभव हो सकता है। वर्षा ऋतु में जल स्तर पर वांछित गहराई पर इस प्रकार नियंत्रण किया जाना चाहिए ताकि वर्षा ऋतु के बाद जल स्तर के चढ़ने की गति से फसलों पर उचित वातन की कमी के कारण, प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। मिट्टी में लाभदायक जीवाणु-सक्रियता को बढ़ाए तथा मिट्टी के गुणों में वृद्धि करें। वर्षा ऋतु के तुरन्त बाद मिट्टी ऐसी अवस्था में आ जाए कि रबी की फसलों के लिए अनुकूल हो।

क्षारीय मृदाओं के खेतों में, सतही निकास की समस्या का समाधान, तालाब बनाकर किया जा सकता है। भारी वर्षा द्वारा प्राप्त अतिरिक्त जल को तालाब में इकट्ठा किया जा सकता है तथा जल का उपयोग रबी ऋतु में सिंचाई के लिए किया जा सकता है। लवणीय मृदाओं में भूमिगत निकास प्रणाली की उचित व्यवस्था द्वारा घुलनशील लवणों का निक्षालन सरलता से हो जाता है। इसके अतिरिक्त, भूमिगत जल स्तर निर्धारित सीमा से नीचा रहता है ताकि भूमिगत जल, मिट्टी में केशिकीय क्रिया से चढ़ कर सतह तक न पहुंच पाए और वहां घुलनशील लवणों का एकत्रीकरण न होने पाए।

तटबंधों में, अतिरिक्त वर्षा जल को हटाने तथा उच्च ज्वार के समय समुद्रीय जल के प्रवाह को रोकने के लिए, एक तरफ हस्तनियंत्रित, जल मार्गों का निर्माण किया जाना चाहिए।

अम्लीय सल्फेट मृदाएं, क्योंकि समुद्र के तटवर्ती क्षेत्र में पाई जाती है, इसलिए इनमें निकास की वे ही प्रणालियां उपयोग में ली जा सकती हैं जो कि समुद्र तटीय लवणीय मृदाओं में उपयोग ली जाती है, लेकिन मृदा के पी-एच. को उदासीन बनाने के लिए चूने का उपयोग साथ में करना वांछित होगा। खपरैल की नालियों द्वारा निकास सफल नहीं होता है भारी गठन की मिट्टियों में सतही नालियों का प्रायः अधिक महत्व होता है। मिट्टी सुधारकों और पुर्नद्धारकों के उपयोग के साथ, खुली रिसवाल-नालियों की सहायता से इन मिट्टियों में निकास की उचित व्यवस्था की जा सकती है।

लवण-प्रभावित मिट्टियों में, प्रोफोइल में उपस्थित अतिरिक्त घुलनशील लवणों और क्षारों को निक्षालित करना भी अत्यंत आवश्यक और महत्वपूर्ण है। लवणीय मृदाओं में निकास की उचित व्यवस्था करने के बाद तथा क्षारीय मृदाओं में सुधारकों के उपयोग के बाद अतिरिक्त लवणों या क्षारों को निक्षारित किया जा सकता है। लवणों के निक्षालन की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि भूमिगत जल-स्तर पर्याप्त नीचा हो तथा वर्षा में किसी भी समय निर्धारित सीमा से अधिक न चढ़े। अतः उन लवणीय या क्षारीय मिट्टियों में से, जिनमें भूमिगत जल-स्तर ऊंचा रहता है, लवणों के सफल निक्षालन के लिए तथा भविष्य में लवणों के अतिरिक्त एकत्रीकरण को रोकने के लिए जल-स्तर को नियंत्रित करना अत्यंत आवश्यक है, जो कि भूमिगत जल निकास की उचित व्यवस्था द्वारा किया जा सकता है। यहां कई बातें ध्यान देने योग्य हैं जैसे कि निक्षालन के लिए आवश्यक जल की मात्रा कितनी है तथा किस प्रकार के लवण हैं, लवणों की मात्रा किस स्तर तक तथा कितनी गहराई तक कम करनी है, तथा मृदा का गठन और भौतिक गुण कैसे हैं। निक्षालन का समय, निक्षालन की विधि और निक्षालन के लिए उपलब्ध जल के गुण भी आवश्यक जल की मात्रा को प्रभावित करते हैं। निक्षालन का उचित समय वह है जबकि भूमिगत जल-स्तर अधिकतम नीचा हो, वाष्पीकरण निम्नतम हो तथा लवणों की घुलनशीलता अधिकतम हो। निक्षालन के लिए उपयोग में लिया जाने वाला जल उच्च कोटि का होना चाहिए। साधारणतया ऐसा माना जाता है कि लवणीय मृदा में एक मीटर गहराई तक लवणों का निक्षालन करने के लिए लगभग एक मीटर जल की आवश्यकता होती है। लेकिन खेतों में किए गए कुछ प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि लवणीय मृदा में 1 मी. गहराई तक निक्षालन करने के लिए लगभग 0.5 मीटर जल ही पर्याप्त होता है। लवण प्रभावित मृदाओं में जल-निकास की उचित व्यवस्था करके, जहां आवश्यक हो, लवणों का निक्षालन वर्षा-जल के सदुपयोग द्वारा सफलतापूर्वक किया जा सकता है लवणीय जल द्वारा सिंचित और अंतःस्थली लवणीय मिट्टियों में लवणों के निक्षालन के लिए, वर्षा जल का सदुपयोग, अत्यंत लाभदायक प्रणाली है। अतः वर्षा में खेतों में अच्छी और मजबूत मेड़ बना कर वर्षा जल को संग्रहित करना चाहिए ताकि इसका अधिकतम उपयोग लवणों के निक्षालन के लिए किया जा सके। खेतों में दूसरे खेतों से बह कर आने वाले अन्य जल को भी मेड़ों द्वारा रोकना चाहिए।

क्षारीयता में सुधार के साथ, पोषक तत्वों में भी वृद्धि हो जाती है तथा जैव पदार्थ के द्वारा मृदा के भौतिक गुणों पर भी लाभदायक प्रभाव पड़ता है। उन फसलों को, जिनको कि

प्रारंभिक अवस्था में ही खेत में जोत दिया जाता है हरी खाद कहा जाता है। इस विधि से भी मृदा की उत्पादकता में वृद्धि होती है तथा स्थायित्व आता है। गोबर की खाद पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होती, मंहगी होती है तथा इसका स्थायी प्रभाव अपेक्षाकृत कम होता है। अतः हरी खादों के उपयोग को लवण-प्रभावित मृदाओं में अधिक महत्व दिया जाता है। दलहनी वर्ग के, खाद के लिए उपयुक्त कई पौधों में, ढैंचा सबसे अधिक उपयोगी पाया गया है, विशेष रूप से क्षारीय मिट्टियों के लिए। ढैंचा की विशेषता यह है कि इसमें मिट्टी के उच्च पी-एच को सहने की क्षमता है। यद्यपि ढैंचा के पौधों में, ग्वार के पौधों की अपेक्षा नाइट्रोजन की मात्रा के आधार पर इसे अन्य खादों की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाता है। ढैंचा की पत्तियों के रस का पी-एच लगभग 4.0 होता है तथा इसी कारण इसके उपचार से क्षारीय मृदाओं का उच्च पी-एच तीव्रता से घट जाता है। विस्तृत जड़ प्रणाली के कारण, मृदा की पारगम्यता में वृद्धि होती है। बंजर लवण प्रभावित मिट्टियों में, परती की अपेक्षा घास उगाने से भी मिट्टी में सुधार हो सकता है, लेकिन यह धीरे-धीरे होता है तथा समय के साथ बढ़ता है। उन परिस्थितियों में जहां किसी कारणवश क्षारीय और लवणीय मिट्टियां परती पड़ी हैं तथा जहां वर्षा ऋतु में अतिरिक्त जल खड़ा रहता हो, जहां सुधारकों का उपयोग तथा अन्य फसलें लिया जाना संभव न हो, वहां घासें उगानी चाहिए, क्योंकि कुछ विशेष वर्ग की घासों को बिना किसी सुधारक द्वारा उपचार को रोपा जा सकता है। बंजर लवण-प्रावित मृदाओं के सुधार में वृक्षों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। क्षारीय मृदाओं में ढाक के वृक्ष लगाने चाहिए इसके अतिरिक्त फराश तथा जाल (झाल) के वृक्ष, लवणीय मृदा में, भली-भांति लगते हैं। बबूल तथा शीशम के वृक्ष लगाने से भी क्षारीय मृदाओं में संतोषजनक सुधार होता है। लवण प्रभावित मृदाओं में बबूल के वृक्ष लगाने से, जड़ क्षेत्र में लवणता तथा क्षारता कम होती है।

72, एस.एफ.एस. फ्लैट्स
गौतम नगर, नई दिल्ली-110016

(पृष्ठ 34 का शेष)

देश में दंगों से पीड़ित परिवारों को अभी क्षतिपूर्ति देने की व्यवस्था है। परन्तु इससे दंगा पीड़ित परिवारों के बच्चों के हितों की रक्षा नहीं हो पाती। इन बच्चों के कल्याण विशेषकर उनकी शिक्षा आदि के लिए स्वशासी गैर-सरकारी संगठन के रूप में साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए राष्ट्रीय प्रतिष्ठान कायम किया जाएगा।

सरकार पर्याप्त धन व्यवस्था से एक राष्ट्रीय नवीकरण निधि स्थापित करेगी। इस निधि से तकनीकी परिवर्तनों के कारण प्रभावित कर्मचारियों के लिए सुधारात्मक उपाय किए जाएंगे और उन्हें पुनः प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाएगी ताकि वे आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में शामिल हो सकें।

चौथे कार्यक्रम में देश के प्रत्येक भाग से युवाओं को दूसरे हिस्सों में जाकर वहां के लोगों से मिलने और काम करने के अवसर देने की एक योजना चलाई जाएगी जिसमें राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा मिलेगा।

पांचवें कार्यक्रम के अंतर्गत भारत से वैज्ञानिकों, तकनीशियनों, इंजीनियरों, शिक्षकों, किसानों, सामाजिक कार्यकर्ताओं को अन्य विकासशील देशों में वहां विकास कार्यों में सहायता के लिए स्वयंसेवक के तौर पर भेजा जाएगा। इससे हम अपना ज्ञान व अनुभव अन्य देशों को पहुंचा सकेंगे। आशा है कि आगामी वर्ष में कम से कम 500 ऐसे स्वयंसेवक चुने हुए देशों में भेजे जाएंगे।

43 मैत्री अपार्टमेंट्स,
ए-3, पश्चिम विहार, दिल्ली-63

सहकारिता आंदोलन : कुछ मुख्य पहलू

सुभाष चन्द्र 'सत्य'

आजादी से पूर्व हमारे देश में आर्थिक विकास का कोई नियोजित प्रयास नहीं हुआ था। इसका मुख्य कारण यह था कि विदेशी सरकार का उद्देश्य इस देश तथा यहां की जनता का उत्थान एवं विकास नहीं बल्कि भारत के साधनों और लोक श्रम का शोषण करके अपने देश ब्रिटेन की तिजौरियां भरना था। स्वतंत्रता के पश्चात हमारे लक्ष्य में परिवर्तन के साथ-साथ कार्य प्रणाली में भी परिवर्तन हुआ। संविधान लागू होने के बाद हमारी सरकार ने नियोजित विकास का रास्ता चुना। हमारे नेताओं,मुख्य रूप से आधुनिक भारत के निर्माता और प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू के प्रयासों से मिश्रित अर्थव्यवस्था के मार्ग पर देश अग्रसर हुआ। इसमें निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन देने के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

लोकतंत्र का प्रतीक सहकारिता

आर्थिक विकास का एक तीसरा क्षेत्र है सहकारिता, जिसने स्वतंत्रता के बाद अपनी अलग पहचान कायम कर ली है। सार्वजनिक क्षेत्र में सरकारी नियंत्रण होता है तो निजी क्षेत्र में व्यक्तिगत लाभ की प्रेरणा से काम किया जाता है, किन्तु सहकारिता के क्षेत्र में लोग सामूहिक रूप से सामूहिक हितों के लिए मिलकर काम करते हैं। सहकारिता वास्तव में लोकतांत्रिक व्यवस्था का सच्चा प्रतीक है। इसमें बिना सरकारी अवलम्बन अथवा निजी स्वार्थ पूर्ति के लोग समान और समूह विशेष के उत्थान के लिए काम करते हैं। सहकारी सिद्धान्त की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें राष्ट्रीय लक्ष्यों के ढांचे के अंतर्गत समूह विशेष का विकास किया जाता है। सहकारी संस्थाओं के पदाधिकारी सदस्यों द्वारा चुने जाते हैं और वे निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयास करते हैं। लोगों द्वारा लोगों के लिए चलाई जाने वाली लोगों की अपनी संस्थाएं ही सहकारी संस्थाएं कहलाती हैं। यह सही है कि कुछ संस्थाओं पर कभी-कभी किसी गुट विशेष का अधिकार हो जाता है और आंतरिक लोकतंत्र का गला घोटने की नौबत आती है, परन्तु इन इक्का-दुक्का उदाहरणों के कारण समूचे सहकारिता आंदोलन को बुरा नहीं माना जा सकता। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि लोकतंत्र ही सहकारिता का आधार है तथा लोकतंत्र ही इसकी सफलता की पहली शर्त है।

सहकारिता आंदोलन का विस्तार

आर्थिक विकास में सहकारी संस्थाओं के योगदान तथा विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी सफलता एवं लोकप्रियता का ही परिणाम है कि सहकारिता आंदोलन का इतनी तेजी से विस्तार हुआ है। इस समय भारत में लगभग साढ़े तीन लाख सहकारी समितियां काम कर रही हैं जिनकी सदस्य संख्या करीब 15 करोड़ है। इस प्रकार कुल आबादी का कोई 20 प्रतिशत भाग सहकारी आंदोलन में शामिल है। सहकारी संस्थाओं की कुल कार्य पूंजी 55 हजार 2 करोड़ रुपये तक पहुंच गई है। सहकारी आंदोलन की एक विशेषता यह है कि इसका विस्तार किसी वर्ग अथवा क्षेत्र विशेष तक सीमित नहीं है। दूर-दराज के क्षेत्रों, पर्वतीय इलाकों, बीहड़ क्षेत्रों, आदिवासी इलाकों, तटीय इलाकों जैसे पिछड़े एवं उपेक्षित क्षेत्रों के लोगों के उत्थान में सहकारी संस्थाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। क्षेत्रीय असंतुलन दूर करने तथा सामाजिक न्याय कायम करने में भी सहकारिता आंदोलन का उल्लेखनीय योगदान रहा है।

कृषि विकास में सहयोग

यों तो सहकारी संस्थाएं उपभोक्ताओं, कारीगरों, श्रमिकों, कलाकारों आदि विभिन्न वर्गों को लाभान्वित कर रही हैं, किन्तु कृषि तथा उससे जुड़ी अन्य गतिविधियों को बढ़ावा देने में सहकारी संस्थाओं ने खूब मदद की है।

कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए किसानों को खाद,बीज,कृषि उपकरण आदि खरीदने के लिए कर्ज की आवश्यकता पड़ती है। किसान की इस जरूरत को पूरा करने के लिए कृषि ऋण सहकारी समितियां सस्ती ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराती हैं। किसान ये ऋण आसान किस्तों में लौटा सकते हैं, जिससे उन पर आर्थिक बोझ नहीं पड़ता। 1989-90 में इन समितियों ने 5588 करोड़ रुपये के ऋण मंजूर किए। कृषि ऋण सहकारी समितियां पंचायत स्तर, खण्डस्तर तथा जिला स्तर पर काम करती हैं। ये समितियां केवल ऋण ही उपलब्ध नहीं कराती बल्कि किसानों के समग्र विकास पर भी ध्यान देती हैं। कुछ समितियां किसानों को ऋण के साथ-साथ भण्डारण, आपूर्ति और विपणन की सुविधाएं भी उपलब्ध कराती हैं। अनाज के भण्डारण के लिए गोदाम तैयार करने में राष्ट्रीय सहकारिता

विकास निगम ने सराहनीय प्रयास किए हैं। 1976-77 में निगम ने अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के सहयोग से गोदाम निर्माण की एक विशाल योजना हाथ में ली। 4800 सहकारी समितियों के पास अपने गोदाम हैं।

ग्रामीण उद्योग धन्धों को बढ़ावा

गांवों में रोजगार जुटाने तथा किसानों के उत्पादों के लाभकारी उपयोग में कृषि आधारित उद्योगों के महत्व को नहीं नकारा जा सकता। सहकारी क्षेत्र में अनेक कताई मिलें, चीनी मिलें तथा तेल पिराई कारखाने सफलता पूर्वक चल रहे हैं। देश में कुल चीनी उत्पादन का 60 प्रतिशत और बुनाई का 20 प्रतिशत काम सहकारी क्षेत्र में होता है। इसी प्रकार 22 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा फास्फेट उर्वरकों का उत्पादन सहकारी क्षेत्र में होता है। इफको तथा कृभको जैसे सहकारी संगठनों ने उर्वरक के उत्पादन में नए रिकार्ड कायम किए हैं।

पशुपालन और मछली पालन जैसे धन्धों के विकास में भी सहकारिता से पर्याप्त सहायता मिली है। उपभोक्ताओं को सस्ती दरों पर दूध उपलब्ध कराने के लिए 60,250 सहकारी दुग्ध समितियां काम कर रही हैं। 1991 के अंत तक इनकी संख्या बढ़कर 6400 तक पहुंच जाने की आशा है। इनकी सदस्य संख्या 60 लाख से भी ऊपर हो जाएगी। गुजरात में दुग्ध सहकारी समितियों का एक परिसंघ स्थापित किया गया है जो इन समितियों को और कारगर बनाने के उपाय कर रहा है। देश में मछुआरों की 8300 से अधिक सहकारी समितियां हैं, जिनकी सदस्य संख्या 9 लाख के करीब है। राष्ट्रीय मत्स्य सहकारी संघ मछुआरों को मछली पकड़ने के आधुनिक तरीकों का प्रशिक्षण देता है और उनके सामाजिक उत्थान के लिए कदम उठाता है। इसने बीमा तथा सामाजिक सुरक्षा की अनेक योजनाएं भी शुरू की हैं।

कृषि विपणन

कृषि विपणन के क्षेत्र में सहकारी आंदोलन की उपलब्धियां महत्वपूर्ण एवं सराहनीय रही हैं। ये समितियां जहां किसानों को उनके उत्पादों का लाभकारी मूल्य दिलाने में सहायक बनती हैं वहीं उपभोक्ताओं को भी अनाज तथा अन्य उत्पादों की आपूर्ति सुनिश्चित करती हैं। देश में 21.5 प्रतिशत गेहूं, 18.5 प्रतिशत खाद और 32 प्रतिशत पटसन की खरीद सहकारी क्षेत्र में की जाती है। कृषि उत्पाद विपणन सहकारी समितियों ने 1987-88 में 3902 करोड़ रुपये का विपणन किया जबकि अगले वर्ष 1988-89 में यह राशि बढ़कर 5530 करोड़ रुपये हो गई। सहकारी विपणन समितियों की शीर्ष संस्था नैफेड की उपलब्धियां अन्य समितियों के लिए प्रेरणा का स्रोत हैं। इस संस्था ने 1958 में काम प्रारम्भ किया और 1989-90 में इसने 257 करोड़ रुपये का कारोबार किया। उस वर्ष इसने 1.05 करोड़ रुपये का शुद्ध मुनाफा कमाया।

यह संस्था किसानों तथा उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के साथ-साथ कृषि जिन्सों का आयात एवं निर्यात भी करती हैं। दालों के आयात की सारी जिम्मेदारी इसी संस्था की है। 1988-89 में 9.21 लाख टन दालों के आयात के लिए सौदे हुए। 1989-90 में 7.20 लाख टन दालों का आयात किया गया। 1989-90 में नैफेड ने 18,2,00 टन मक्का का अमरीका से आयात किया। यह आयात अमरीका सरकार की सहायता योजना के अंतर्गत किया गया।

विदेशी मुद्रा अर्जित करने में भी सहकारी आंदोलन का उल्लेखनीय योगदान है। 1989-90 में 3,60,000 टन प्याजों का निर्यात किया गया जिससे 84.55 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई। आलू, सेब, माल्टा, अदरक तथा अन्य सब्जियों एवं फलों के विपणन के माध्यम से भी नैफेड किसानों के हितों की रक्षा करता है। खाद्य संसाधन के क्षेत्र में भी इस संस्था ने कई नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं।

शहरी क्षेत्रों में आवास, लघु उद्योग आदि क्षेत्रों में सहकारी समितियां सफलतापूर्वक काम कर रही हैं। सहकारी आंदोलन के विस्तार की हमारे देश में अभी और भी संभावनाएं हैं। यह तभी हो सकता है जब इसके लोकतांत्रिक आधार और स्वरूप पर आंच न आने दी जाए और सरकार तथा जनता पूरी आस्था के साथ इस आंदोलन को सफल बनाने के प्रयास करें।

सी-7/134 ए
केशव पुरम (लारेंस रोड)
दिल्ली-110035

सहकारिता की मुंडेर पर सम्पन्नता के दीप

पी. सी. सैनी

विगत 20 वर्षों के भीतर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कार्यों में जो परिवर्तन आया है उसे देख कर आश्चर्यचकित हो जाना पड़ता है। अभी कुछ समय ही पूर्व गांव में कृषि कार्य हल बैल प्रधान था और जुताई, बुवाई, मड़ाई आदि सभी कार्य बैलों द्वारा सम्पादित होते थे और शेष कार्य निराई, सिंचाई, कटाई और उडौनी आदि कृषक को स्वयं अपने हाथ से करने पड़ते थे और इस प्रकार किसान को पूरे वर्ष अपना समय कृषि कार्य में ही लगाना पड़ता था उसके लिए अवकाश के क्षण बहुत कम थे। कुछ ही समय पूर्व विकास की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई और मानव व पशु के श्रम की पूर्ति मशीनों ने करना प्रारम्भ किया। ट्रैक्टरों ने जुताई, बुवाई, मड़ाई और कृषि उत्पादन को मण्डियों तक पहुंचाने का कार्य सम्भाला। जो कार्य बैलों के द्वारा एक मास में पूर्ण किए जाते थे ट्रैक्टरों के द्वारा वे कार्य एक दिन में पूर्ण होने लगे। बैलों की उपयोगिता समाप्त हो गई। पम्पसेट और ट्यूबवेल लगे,सिंचाई के साधन सुलभ हुए। विभिन्न प्रकार की कीटनाशक व खर-पतवार नाशक दवाएं आईं और विभिन्न कृषि उत्पादनों में क्रान्तिकारी परिवर्तन स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगे।

ग्रामीण विकास के परिवर्तन की इस प्रक्रिया में सहकारी समितियों ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। यद्यपि सहकारी आंदोलन के प्रारम्भ में सहकारी समितियां केवल कृषि कार्यों के लिए ऋण वितरण का ही काम करती थीं जो कृषि आवश्यकताओं की तुलना में नगण्य था। अपर्याप्त भूमिका को प्रभावशाली बनाने के लिए सहकारी समितियां धीरे-धीरे अपने क्षेत्र को विस्तृत करती चली गईं। समूचे प्रदेश में न्याय स्तर पर कृषि सहकारी समितियां इस समय कृषकों को उन्नतशील बीज, रासायनिक उर्वरक, आधुनिकतम कृषि यंत्र और कीटनाशक दवाएं उपलब्ध कराने के साथ-साथ कृषि कार्यों के लिए अंश क एवं अंश ख नकद व कृषि निवेश के रूप में फसली ऋण उपलब्ध कराती हैं जिससे उसे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सूदखोर महाजनों के सामने हाथ न फैलाने पड़े। दिया गया ऋण किसी प्रकार की कटौती का शिकार न हो इसीलिए समितियों द्वारा कृषकों को ऋण का चैक दे दिया जाता है जिसका भुगतान वह अपनी सुविधानुसार प्रत्येक विकास क्षेत्र में तदर्थ खोली गई जिला सहकारी बैंक की शाखा से ले सकता है। इस ऋण पर अन्य साधनों की अपेक्षा किसान को बहुत कम ब्याज देना पड़ता है तथा महाजनों के शोषण, अन्याय और अपमान से भी वह पूर्णतया सुरक्षित रहता है।

सहकारिता के शनैः शनैः कदम आगे बढ़े और इसमें एक नवीन लाभकारी और प्रभावी परिवर्तन लाया गया है।

वर्तमान में गांव के आर्थिक विकास तथा कृषि उत्पादन में सहकारी समितियों का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रदेश के 57 जिला केन्द्रीय सहकारी बैंकों की 1376 शाखाओं के द्वारा 8589 पुर्नगठित सहकारी समितियों के माध्यम से किसानों को चैक द्वारा ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। ऋण वितरण की कार्यवाही में पहले कुछ दोष कई कारणों से उत्पन्न हो गए थे जिसको दृष्टि में रखते हुए वर्तमान ऋण वितरण प्रणाली को सरल गतिशील तथा प्रभावकारी बनाने के उद्देश्य से आमूल परिवर्तन किए गए हैं और उसी को नई चैक प्रणाली के नाम से सम्बोधित किया गया है। नई चैक प्रणाली के अन्तर्गत सदस्य चैक बुक को प्राप्त करने के लिए बैंक में अवश्य जाना होगा। बैंक का अधिकृत व्यक्ति सदस्य की पास बुक में लगे फोटो का मिलान बैंक स्तर पर उपलब्ध समिति के एलबम में लगे फोटो से करके सदस्य की पहचान करेगा। तत्पश्चात् बैंक शाखा प्रबंधक/अधिकृत व्यक्ति द्वारा सदस्य को अंश क एवं अंश ख की चैक बुक रजिस्टर में चढ़ा कर सदस्य के हस्ताक्षर या निशानी अंगूठा लगवाने के बाद सदस्य के व्यक्तिगत खाते में उसकी पासबुक में चैक बुक का नम्बर दर्ज करके दे दिया जाता है।

सदस्यों को समितियों द्वारा जो चैकबुक उपलब्ध कराई जाती है वह दो प्रकार की होती है। अंश क एवं अंश ख जो क्रमशः लाल व हरे रंग की होती है प्रत्येक चैक बुक में 10 चैक होते हैं। नकद रु. लेने के लिए अंश क की तथा बीज वस्तु एवं रासायनिक उर्वरक के लिए अंश ख की चैकों को काट कर सीधे भुगतान सदस्य ले सकता है। इस प्रणाली में इसीलिए यह प्रावधान किया गया है कि यदि सदस्य अनपढ़ है तो वह अपने

परिवार मित्र या गांव के शिक्षित लोगों से चैक को भरवा कर भुगतान प्राप्त कर सकता है। सचिव द्वारा भरी गई चैक मान्य नहीं होगी क्योंकि ऐसा होने से वह कोई गलत कार्यवाही न कर सके। प्रत्येक सदस्य अपने अंशपूंजी के 10 गुने तथा दुर्बल वर्ग की दशा में 20 गुने अल्पकालीन ऋण प्राप्त कर सकता है। कोई सदस्य अपनी जोत सीमा एवं अंशपूंजी के हिसाब से 12500/- तक ऋण प्राप्त कर सकता है।

तहसील स्तर पर नियुक्त सहकारी शिक्षा प्रशिक्षक सचल इकाइयों के माध्यम से सदस्यों को चैक काटने के सम्बंध में तथा उसके उपयोग के लिए प्रशिक्षण देते हैं।

खेती के कामों के लिए उन्नतशील बीज, खाद दवाइयां खरीदने के लिए एक वर्ष के लिए ऋण दिया जाता है। उसे फसली ऋण या अल्पकालीन ऋण कहते हैं। 5 वर्ष के लिए भैंस-बैल छोटे कृषि यंत्र, नलकूप गाड़ियां व गोबर गैस आदि के लिए दिया जाने वाला ऋण मध्यकालीन ऋण व दीर्घ कालीन ऋण कहा जाता है। यह भूमि विकास बैंक द्वारा सिंचाई के नलकूप, पम्पिंग सेट, ट्रैक्टर, बोरिंग, भूमि सुधार आदि के लिए दिया जाता है, जिसकी शाखाएं हर तहसील स्तर पर कार्यरत है। इसके अतिरिक्त समिति अपने मेम्बर को मुंडन, छेदन, शिक्षा, विवाह तथा मृतक संस्कार आदि के लिए ऋण देती है।

खाद्यान्न के रूप में मैदानी क्षेत्रों के लिए 450/- अंश क हेतु 750/- रु. अंश ख हेतु प्रति एकड़ के हिसाब से तथा नकदी हेतु 600 रु., अंश क हेतु एवं अंश ख हेतु 900 रु.। योग 1500 रु. ऋण कोई भी मेम्बर ले सकता है। इसी तरह पर्वतीय क्षेत्रों के लिए खाद्यान्न के लिए अंश क हेतु 600 रु. अंश ख हेतु 600 रु. योग 1200 रु. तथा नकदी के रु. अंश क हेतु 600 तथा ख हेतु 900 रु. कुल योग 1500 रु. तक प्रति एकड़ के हिसाब से ऋण ले जाता है।

विश्व बैंक की सहायता से अब अधिकांश समितियों में अनाज, खाद, कपड़ा, चीनी, मिट्टी का तेल, खेती के यंत्र व दैनिक इस्तेमाल की चीजों को रखने (भण्डारण) के लिए पक्के ग्रामीण गोदाम तैयार कराए जा चुके हैं ताकि कम समय में तथा नजदीक ही आपकी आवश्यकता का हर सामान यथा सम्भव मिल सके। काफी तादाद में खाद बिक्री केन्द्र खोले जा चुके हैं।

अब सहकारिता धीरे-धीरे सभी क्षेत्रों में फैल चुकी है और ऋण के अतिरिक्त उद्योग, उपभोक्ता पशुपालन (दुग्ध), मछली पालन, कुक्कुट पालन, सुअर पालन, मधुमक्खी पालन आदि के लिए अनेक प्रकार की सहकारी समितियां काम कर रही हैं।

खेतिहर मेम्बरों को उनकी पैदावार का सही मूल्य मिले तथा बेचने की सुविधा मिल सके इसे ध्यान में रखते हुए क्रय-विक्रय समितियां सहकारी कोल्ड स्टोर, धान मिल, दाल मिल व वनस्पति मिल आदि स्थापित की गई हैं।

अनेक सहकारी समितियों द्वारा अपने मेम्बरों को चीनी, मिट्टी का तेल, खाने वाला तेल, कपड़ा, नमक, साबुन, माचिस, चाय, ब्लेड, टायर, ट्यूब, बल्ब, कापियां आदि सस्ते एवं उचित मूल्य पर दिया जाता है।

सहकारी समितियों का प्रबन्ध कुशल व्यक्तियों के हाथों में सौंपने से ही समितियां स्वावलम्बी होकर अपने पैरों पर खड़ी हो सकती हैं जिसके लिए यह बहुत जरूरी है कि हर मेम्बर को अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। सहकारी शिक्षा प्रशिक्षण एवं प्रचार-प्रसार एक सशक्त माध्यम है जो कि पी. सी. यू. द्वारा चलाया जा रहा है और प्रचार-प्रसार की अनेक विधियों द्वारा सदस्यों/भावी सदस्यों में सहकारी आन्दोलन के प्रति आस्था विश्वास व जागरुकता पैदा की जाती है।

यह सहकारी समितियां आप लोगों के हितों एवं खुशहाली के लिए आपके सहयोग व संगठित शक्ति द्वारा ही बनाई गई हैं। पदाधिकारी व संचालक के रूप में आप ही उसके मालिक और कर्ता-धर्ता हैं। इनका लाभ और बचत भी आप ही को मिलता है। अतः आप खुशी से सच्ची लगन से व निःस्वार्थ भाव से जुट कर समिति की तरक्की व खुशहाली के लिए भरसक कोशिश करें। समिति की प्रणाली और समृद्धि पर ही आपका विकास निर्भर है तथा आप सबके विकास में ही सारे देश व राष्ट्र की खुशहाली छिपी है। आपकी आस्था विश्वास व सहयोग से ही सहकारिता की मुंडेर पर सम्पन्नता के दीप प्रज्वलित होंगे।

अ. प्राप्त. उप. निबन्धक (सहकारी समितियां)
मो. गोपालपुरी (निकट विशेश्वर नगर)
आलमबाग, लखनऊ, उ. प्र.

राजस्थान में कृषि विपणन प्रशासन

अमर चन्द सिंघल

स्वतंत्रता के उपरान्त कृषि विपणन में सुधार के उद्देश्य से योजना आयोग ने अनेक कारगर कदम उठाए। राज्य सरकार ने योजना आयोग की भावनाओं का आदर करते हुए 1961 में राजस्थान कृषि उपज विपणन अधिनियम पारित किया जिसके अधीन 1963 में नियमों का निर्माण किया गया। राज्य सरकार का उद्देश्य अधिनियम के माध्यम से कृषि उपज मंडियों की स्थापना एवं उनका नियमन करना था। 1973 में अधिनियम में संशोधन करके, नाहर समिति के प्रतिवेदन पर, विपणन अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी ढंग से क्रियान्वित करने मंडी प्रांगणों का निर्माण करने एवं मंडी क्षेत्र में सम्पर्क सड़क आदि के निर्माण के उद्देश्य से एक स्वायत्तशासी बोर्ड के गठन का प्रावधान किया गया जिसे राजस्थान राज्य कृषि विपणन मण्डल के नाम से जाना जाता है। प्रारम्भ में कृषि उपज मंडी समितियों के कार्यकलापों का नियंत्रण, मार्गदर्शन एवं पर्यवेक्षण विपणन बोर्ड द्वारा ही किया जाता था। लेकिन 1980 में राष्ट्रीय कृषि आयोग की सिफारिशों के आधार पर अधिनियम में एक बार पुनः संशोधन कर कृषि विपणन निदेशालय की स्थापना की गई। निदेशालय की स्थापना के पश्चात विपणन मण्डल का कार्यक्षेत्र मंडी समिति क्षेत्रों में, प्रांगणों, संपर्क सड़कों आदि का निर्माण अंकेक्षण अनुपालना, मंडी सचिवों व अन्य कर्मचारियों का प्रशिक्षण, कृषि विपणन से सम्बन्धित अनुसन्धान आदि रखा गया जबकि निदेशालय को मंडी नियमन, एगमार्क प्रयोगशालाओं की स्थापना, व्यावसायिक वर्गीकरण, बजट स्वीकृतियां मंडी परिज्ञान एवं मूल्यांकन सामान्य प्रशासन एवं संस्थापन कार्य सौंपे गए।

विपणन प्रशासन का संगठन मुख्यतः द्विस्तरीय है जिसमें राज्य स्तर पर कृषि विपणन विभाग एवं राजस्थान राज्य कृषि विपणन मंडल है तथा स्थानीय स्तर पर कृषि उपज मंडी समितियों की स्थापना की गई है। राज्य के सर्वोच्च स्तर पर कृषि मंत्री द्वारा कृषि विपणन विभाग का राजनैतिक नेतृत्व किया जाता है जिसके अधीन कृषि उत्पादन सचिव न केवल मंत्री को राजनैतिक परामर्श उपलब्ध कराता है अपितु, राज्य में कृषि विपणन नियमन एवं संवर्द्धन कार्यक्रम में निष्पादन की प्रक्रिया का नेतृत्व करता है। राजनैतिक के रूप में मंत्री और विशेषज्ञ के रूप में सचिव कृषि विपणन से सम्बन्धित नीतियों के निर्माण के प्रमुख शिल्पी होते हैं।

कृषि विपणन विभाग का कार्य जहां प्रमुख रूप से नीति निर्माण से होता है वहीं उनके कुशल एवं प्रभावी कार्यान्वयन के लिए विभाग को सम्बन्धित सूचनाओं एवं आंकड़ों का संचालन तथा तकनीकी परामर्श प्रदान करने का कार्य निदेशालय द्वारा किया जाता है जिसका नेतृत्व निदेशक द्वारा किया जाता है।

राजस्थान राज्य कृषि विपणन मण्डल एक स्वायत्तशासी संस्था है जिसका गठन कृषि उपज मंडी समितियों द्वारा कृषक एवं व्यापारिक प्रतिनिधियों में से चयनित 15 सदस्यीय समिति द्वारा किया जाता है। समिति अपने सदस्यों में से एक अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष का चुनाव करती है। सचिवीय सहायता के लिए एक पूर्णकालीन सचिव भी होता है। स्थानीय स्तर पर कृषकों को उपज का उचित मूल्य दिलानें एवं बिचौलियों से मुक्ति के उद्देश्य से कृषि उपज मंडी समितियां स्थापित की गई हैं जिनका संचालन कृषक एवं व्यापारियों की सम्मिलित सात सदस्यीय समिति द्वारा किया जाता है। समिति एक अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष का चुनाव भी करती है। मंडी समिति की सचिवीय सहायता के लिए एक सचिव होता है जिसे मंडी सचिव के नाम से जाना जाता है।

सामान्य रूप से कृषि विपणन प्रशासन निम्नलिखित कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं (1) मंडी नियमन एवं संवर्द्धन (2) निर्माण कार्य (3) प्रचार एवं अनुसंधान।

मंडी नियमन एवं संवर्द्धन

विपणन प्रशासन का एक महत्वपूर्ण कार्य मंडियों का नियमन करना है। इसके अन्तर्गत राज्य में मंडी समितियों की स्थापना, उसका नियमन कर इसके माध्यम से कृषक को उचित मूल्य की प्राप्ति, मानक तौल एवं माप की व्यवस्था, बिचौलियों से मुक्ति, कृषकों को तुरन्त एवं विक्रय स्थान पर ही भुगतान का प्रबन्ध, वर्गीकरण एवं श्रेणीयन की सुविधाएं प्रदान की जाती है। अब तक राज्य में 139 मंडी समितियों की स्थापना की जा चुकी है।

निर्माण कार्य

राजस्थान राज्य कृषि विपणन मण्डल, राज्य में आधुनिक सुविधाओं से युक्त मंडी प्रांगणों, संपर्क सड़कों, ग्रामीण गोदामों आदि के निर्माण के लिए उत्तरदायी है। इसके लिए वित्तीय व्यवस्था, मंडी के स्वयं के स्रोतों से तथा राष्ट्रीय कृषि एवं

(शेष पृष्ठ 45 पर)

पुस्तक समीक्षा

कविता नहीं कुरुक्षेत्र

सम्पादक-राजेश श्रीवास्तव, प्रकाशक—जयश्री प्रकाशन, 4/115, बाजार गली, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-32, पृष्ठ सं.—88 मूल्य—50/- रु.

कवि समाज का सृष्टा और दृष्टा है। वह समाज का अंग भी है। अतः कवि समाज में रहकर अपनी अर्जित अनुभूतियों को कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार कविता कवि के भावों को जनमानस तक सम्प्रेषित करने में सक्षम होती है। सच्चा कवि न केवल समाज को मूक दर्शक की भांति देखता रहता है, अपितु अपनी कविता के माध्यम से नए समाज की संरचना में सहभागिता भी सुनिश्चित करता है। इस अर्थ में कवि और कविता का महत्व और भी बढ़ जाता है। आज जबकि सामाजिक एवं नैतिक जीवन मूल्यों का निरन्तर पतन हो रहा है, आम आदमी का जीवन दुरूह हो गया है। समस्त देश ही नहीं अपितु विश्व एक कुरुक्षेत्र बन गया है। ऐसे माहौल का यथार्थ चित्रण करने के लिए कविता का कुरुक्षेत्र बन जाना स्वाभाविक है।

समीक्ष्य कृति के माध्यम से आठ युवा महारथी कविता रूपी कुरुक्षेत्र में अपनी कलम को तलवार बनाकर उतर पड़े हैं। निश्चय ही यह साहित्यिक महारथी अपनी कलम के पैनेपन से संकट के समस्त आयुधों को काटकर नए जीवन मूल्यों की प्रतिस्थापना में सहायक हो सकेंगे।

"कविता नहीं कुरुक्षेत्र" नवगीत, ग़ज़ल एवं नई कविता की वह अनुपम त्रिवेणी है जिसकी काव्यधारा में अवगाहन करके पाठक मानवता का पहला पाठ सीख सकता है। संकलन में सर्वश्री आलोक बेजान, डा. नरेश मिश्र एवं सतपाल की ग़ज़लें, रमेश प्रसून के नवगीत तथा राजेश श्रीवास्तव, विपिन बिहारी, सुभाष प्रेमी सुमन और प्रमोद प्रशान्त की नई कविताएं उनके परिचय, आत्मकथ्य, सम्पादकीय एवं समीक्षकीय सम्मतियों सहित संकलित की गई हैं।

भाई आलोक बेजान की हिन्दी प्रकृति की ग़ज़लें समाज और जीवन की विसंगतियों एवं विडम्बनाओं की अनुभूति कराने में समर्थ हैं। एक शेर देखिए—

"न्याय उस असहाय को कैसे मिलेगा दोस्तो—
चाटुकारों से घिरा है न्याय का दरबार भी।"

डा. नरेश मिश्र की ग़ज़लें रूमानी अनुभूतियों पर आधारित अपने पारम्परिक स्वरूप के दर्शन कराती हैं। प्रेम-सौन्दर्य एवं विरह-व्यथा को इनकी ग़ज़लों ने वाणी दी है। अपने कथन के समर्थन में यह शेर उद्धृत करता हूं—

"उनके आने से, खुश हो जाऊंगा मैं,
बस, उनके चश्म का बीमार हूं मैं।"

कवि सतपाल की ग़ज़लें अपनी सम्पूर्ण जीवन्तता के साथ जीवन की विवशताओं, विसंगतियों एवं विद्रूपताओं के शब्दचित्र उकेरने में सफल हो सकी हैं। इस संदर्भ में उनके कतिपय शेर देखिए—

"ऐसी पहचान का करें क्या फिर—
जिसमें बस फर्ज ही निभाने हैं।"

अथवा

"चौराहों पर हरदम मंडराता मौत का काला साया है
किसके द्वार पर दस्तक देगा सबका मन घबराया है।"

कवि रमेश प्रसून ने अपने नवगीतों के माध्यम से आम आदमी की जिंदगी की त्रासदी को पारिभाषित एवं परिलक्षित करने का सार्थक प्रयास किया है। उदाहरणार्थ—

"रेत के घरौंदे कहीं, तिनकों-से घोंसले।
करती रही जिंदगी, जीने के हौसले।"

अछूती उपमाओं एवं टटके बिम्बों के माध्यम से दिन का अनूठा चित्रण करती उनकी उदाहरणीय पंक्तियां हैं—

"पतझारी तरुवर पर/
नन्हीं-सी कोंपल-सा निकला है दिन।"

नई कविता के काफिले में कवि राजेश श्रीवास्तव की कविताएं सर्वाधिक प्रभवित करती हैं। वे जन और जमीन से

जुड़े व्यक्तित्व हैं। अतः उनकी रचनाओं में आज के सच को अभिव्यक्ति मिली है। अनुभूति की तीव्रता, प्रभावोत्पादकता एवं पैना प्रस्तुतीकरण उनकी कविताओं की विशेषता है। प्रस्तुत पंक्तियां इस बात का प्रमाण है—

अथवा

"कितना बड़ा अपराधी हूं मैं,
मरने और मारने के इस दौर में
जिंदा रहने का आदी हूं मैं।"

कवि विपिन बिहारी की कविताएं अपनी भाव प्रवणता, अनुभूतिक सघनता वैचारिक सौष्ठव एवं अभिव्यक्ति की सहजता से पाठक-मन को अनायास ही प्रभावित कर लेती हैं। "बरगद और बैसाखियां" कविता की कुछ पंक्तियां इस संदर्भ में प्रस्तुत करना चाहूंगा—

"ईंट सीमेंट से बनी/ऊंची-ऊंची इमारतें
पल भर में ही/ढहते देखी गई हैं।
और उन्हीं की छांव तले/कितने ही /बेफिक्री से पाए गए हैं।"

भाई सुभाष प्रेमी सुमन ने आज की मानसिकता एवं चिंतन प्रक्रिया को उजागर करते हुए अपनी कविताओं के माध्यम से अतीत की उपयोगिता को आत्मसात करने, वर्तमान को झेलने तथा स्वर्णिम भविष्य के प्रति संकल्पबद्ध रहने का संदेश दिया है। देखिए—

"पुरुषार्थ चुनौती देता है—
बबूल से तुम आम ही नहीं—
कुछ भी पा सकते हो,
मन में धैर्य, निश्चय, विश्वास, मस्तिष्क में युक्ति
और मांसपेशियों में साहस का वास हो तो।"

भाई प्रमोद कुमार सिंह प्रशान्त की कविताएं भावों, विचारों एवं प्रतीकों की दृष्टि से लौकिक एवं पारलौकिक जगत से परिचित कराने में सफल हुई हैं। उनकी पंक्तियां इस संदर्भ में दृष्टव्य हैं—

"एक भी आंसू न कर बेकार,
कब समन्दर मांगने आ जाए।"

कुल मिलाकर "कविता नहीं कुरुक्षेत्र" एक सार्थक काव्यात्मक प्रस्तुति है। चूंकि भाई राजेश श्रीवास्तव स्वयं कवि हैं, अतः संकलन की गुणवत्ता एवं महत्ता और भी बढ़ गई है।

संकलित कवियों की रचना-प्रक्रिया से गुजरने के उपरान्त यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि "कविता वास्तव में एक कुरुक्षेत्र है जहां धर्म-अधर्म, कला-जीवन, सत्य-मिथ्या, अनुभूति-अभिव्यक्ति के बीच अनवरत संघर्ष चलता रहता है। कविता मन के कुरुक्षेत्र में अभिव्यक्ति के पक्ष में लड़ा गया है अनवरत, अनाम संवेदनात्मक युद्ध है" जिसे इन कवियों ने कथ्य, शिल्प एवं भाषा की दृष्टि से निश्चय ही जीत लिया है। रचना-चयन, प्रस्तुतीकरण, मुद्रण एवं साज-सज्जा की दृष्टि से भी संकलन पठनीय एवं संग्रहणीय है।

डा. रोहिताश्व अस्थाना
बाबा मंदिर, हरदोई-241001(उ. प्र.)

(पृष्ठ 43 का शेष)

ग्रामीण बैंक से ऋण प्राप्त करके की जाती है। 1989-90 में 54 करोड़ रुपये व्यय करके 925 कि. मी. लम्बी सड़कों का निर्माण कराया गया।

प्रचार एवं अनुसन्धान

इसके अन्तर्गत विपणन प्रशासन, कृषकों को विपणन सम्बन्धी जानकारी देने के उद्देश्य से प्रदर्शनियों का आयोजन, रेडियो बुलेटिन, टेलीविजन पर सम्बन्धित कार्यक्रमों का प्रसारण एवं फिल्म प्रदर्शन आदि कार्यक्रम चलाए जाते हैं। राज्य स्तर पर सेमिनारों एवं सर्वेक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इन कार्यक्रमों के सफल कार्यान्वयन के लिए विपणन मंडल में सांख्यिकी एवं अनुसंधान प्रकोष्ठ का गठन किया गया है।

निष्कर्ष

राजस्थान के कृषि विपणन प्रशासन के कार्य का समग्र मूल्यांकन करने के उपरान्त यह उद्घाटित होता है कि कृषि विपणन की प्रभावी व्यवस्था के लिए प्रशासन ने उल्लेखनीय प्रयास किए हैं तथापि इसमें अनेक कमियां दृष्टिगोचर होती हैं। मंडी समितियों एवं विपणन मण्डल के चुनाव एक लम्बे अन्तराल से नहीं हुए हैं। अतः इन संस्थाओं में लोकतांत्रिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। निर्माण कार्यों में घटिया सामग्री का उपयोग एवं धन के अपव्यय की शिकायतें सामान्य मिलती हैं। विपणन विभाग एवं विपणन मण्डल के कार्यों में समन्वय का अभाव है। कृषि उपज मंडी में प्रभावशाली व्यापारियों के नियंत्रण आदि की समस्याएं हैं। इन समस्याओं के प्रतिकार की आवश्यकता है। अतः उपरोक्त विचार बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए कृषि विपणन प्रशासन में व्यापक संशोधन एवं सुधार की आवश्यकता स्वयं सिद्ध है।

4/466 राजा पार्क,
जयपुर-302004

पशुधन और भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था

डा. ओ. पी. गुप्ता

भारत में पशुधन का धार्मिक भावनाओं के साथ जुड़ने से पशु पालन का महत्व आज आर्थिक उद्देश्य से भी जुड़ गया है। ''गौ धन गज धन बाजिधन'' अर्द्धालि से स्पष्ट है कि अतीत में भी पशु पालन का आर्थिक दृष्टि से बहुत महत्व था। वर्तमान में तो इसका और भी महत्व बढ़ गया है जबकि इस मशीनी युग में दूषित वातावरण, दूषित विचार, खान-पान सबने मनुष्य जीवन को अंधकारमय बना दिया है।

सभ्यता के प्रारम्भ से ही पशु और मानव का साथ है। भारत में दोनों को जोड़े रखने के लिए महर्षियों ने पशुओं को भी उतना धार्मिक महत्व दिया जितना कि आदि मानवों को। गाय, सांड, हाथी, आदि जितने धार्मिक दृष्टि से पूज्य माने गए उतने ही ये वैज्ञानिक दृष्टि से उपयोगी हैं। पंचामृत में गाय का मूत्र किसी भी वैज्ञानिक कसौटी पर उतना ही खरा उतरा है जितनी कि अन्य कोई प्रतिरोधात्मक दवा। पशु पालन आज के भारत की आर्थिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। शहरीकरण व पाश्चात्य सभ्यता की नकल ने जरूर हमको अंधा बना दिया है जिससे हम मशीनों पर निर्भर होकर इसको भुला बैठे हैं। आज भी अगर हम पशु पालन से केवल दुग्ध व्यवसाय को ही ले लें तो हमारे देश व समाज का बहुत भला होगा व हम आर्थिक दृष्टि से भी स्वावलम्बी बनेंगे। सभी वर्गों को इस दुग्ध की आवश्यकता होती है। शहरों तथा गांवों में सभी इसकी कमी व शुद्ध दुग्ध के लिए तरस रहे हैं। इसके अभाव में शारीरिक तथा मानसिक विकास पर जो बुरा असर हो रहा है और जिसको हम डिब्बों के कृत्रिम दुग्ध से पूर्ति करने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन उसके भयंकर दुष्परिणामों की कल्पना से हम परे हैं।

भारत में पशुधन

संसार के कुल पशु संख्या का 1/6 भाग भारत में पशु धन है। पशु संख्या की दृष्टि से भारत विश्व में पहला स्थान और पशु धनत्वमें दूसरा स्थान रखता है। 1950 के समय देश में 2850 करोड़ पशु थे जो 1980 में बढ़कर 36.98 करोड़ हो गए इस प्रकार पिछले तीन दशकों में 8.5 करोड़ की वृद्धि हुई है। शहरीकरण के कारण अब प्रति वर्ष यह संख्या गिर रही है। दुग्धोत्पादक पशुओं (गाय, भैंस) की वृद्धि औसतन 25 प्रतिशत प्रति वर्ष तथा बकरी भेड़ों में यह प्रतिशत लगभग 60 है। माल ढोने वाले पशु जैसे ऊंट, घोड़े, गधों में वृद्धि की अपेक्षा इनकी संख्या में कमी हो रही है इसका मूल कारण यातायात के साधनों मे वृद्धि होना व इनको कम महत्व देना है। सूअर भी लगभग 9 प्रतिशत की दर से बढ़ रहे हैं। अगर भारत के पशुओं की तुलना संख्यात्मक दृष्टि से विश्व के पशुओं से की जाए तो जहां पूरे विश्व में लगभग 90 करोड़ गाएं हैं तो केवल भारत में 18 करोड़ हैं। इसी प्रकार 10 करोड़ विश्व की भैंसों में भारत में 6 करोड़ भैंसे हैं। इस प्रकार दुनिया की आधी भैंसे भारत में ही है। पूरे विश्व में भेड़ें एक अरब के लगभग हैं तो भारत में इसका पच्चीसवां भाग यानी 4 करोड़ भेड़ें हैं। इसी प्रकार विश्व में लगभग 35 करोड़ बकरियां हैं तो अकेले भारत में 7 करोड़ के लगभग हैं। भारत के ग्रामीण आर्थिक जीवन में पशुओं का प्राचीन काल से ही महत्व रहा है।

(1) दुग्ध की प्राप्ति

दुध देने वाले पशुओं में गाय-भैंस एवं बकरी की गिनती होती है। इनका दूध हमारे जीवन के लिए आवश्यक माना गया है। गाय का दूध तो अमृत तुल्य तथा भैंस का दूध शक्ति दायक होता है। इसके दूध से ही घी, मक्खन, दही एवं छाछ की प्राप्ति होती है। दूध जहां जीवनदायक होता है वहीं इससे प्राप्त अन्य सामग्री से भोजन में पौष्टिकता तथा विविधता आती है अगर इसके आर्थिक पक्ष पर भी ध्यान दें तो एक परिवार का संचालन पांच दूध देने वाले पशुओं के पालन से ही चल सकता है।

(2) गोबर एवं खाद

दूध देने के साथ-साथ पशु हमें बहुमूल्य खाद यानी गोबर प्रदान करते हैं। जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है। हां पहले हम इसे ईंधन के रूप में प्रयोग करते थे और अब भी करते आ रहे हैं परन्तु ईंधन के रूप में गोबर का प्रयोग करके हम नुकसान कर रहे हैं इसी प्रकार पशुओं के सींग,खुर एवं हड्डियों का दुरुपयोग भी अस्थि चूर्ण बनाने में होता है। दोनों प्रकार के खाद से अनुमान है कि 270 करोड़ रुपये की सामग्री हमें पशुओं से प्राप्त होती है। जो आज रासायनिक खाद उपयोग में लाया जा रहा है उससे कितनी हानियां हो रही हैं हमें सर्वविदित है। यहां हमें करोड़ों रुपयों की विदेशी मुद्रा चुकानी पड़ी है तथा पड़ती है जिससे कि हमें यह तकनीक मिलती है। इसी प्रकार इससे रासायनिक दुष्परिणाम भी झेलने पड़ते हैं। भोपाल गैस को हम भुला नहीं पाए हैं। इन रासायनिक खादों के कारखानों को स्थापित करने में हमें बहुत भारी भरकम राशि जुटानी

पड़ती है तथा विदेशी ऋणों से हम हर भारतीय को दबाते जा रहे हैं। हर किसान आज बैंक के सामने इन रासायनिक खादों को खरीदने के लिए झोली फैलाए खड़ा है जबकि गोबर एवं मूत्र से स्वतः ही खाद उत्पन्न होता है। तथा गौ मूत्र तो कई बीमारियों में दवाई की तरह उपयोग में आता है। यहां गोबर खाद सर्वोत्तम खाद है इसका ज्ञान सर्वविदित होने के कारण विश्लेषण करना आवश्यक नहीं है। इसलिए केवल हम आर्थिक पहलू पर ही विचार कर रहे हैं। देशी तकनीक किसान को सब प्रकार से उपयोगी एवं आत्म निर्भर बनाती है।

(3) गोबर गैस

खाद की उपलब्धि के साथ-साथ गोबर का उपयोग गोबर गैस बनाने में प्रचुर मात्रा में होने लगा है। पूरे देश में अब गोबर गैस संयंत्र लगने लगे हैं जिनके लगाने पर सरकार व खादी ग्रामोद्योग अनुदान देता है। इनसे बहुमूल्य खाद तो बनती ही है इसके अलावा भोजन पकाने हेतु गैस तथा बिजली व्यवस्था भी हो जाती है।

(4) आवागमन की सुविधा

पहाड़ी इलाकों में ऊंट आज भी यातायात का साधन है। राजस्थान के मरुस्थल में ऊंट को रेगिस्तान का जहाज कहते हैं। आज भी हमारे लगभग 3 लाख गांव किसी प्रकार से यातायात के साधनों से दूर हैं। वहां पर बैलगाड़ी, ऊंटगाड़ी और घोड़ा गाड़ियों का यातायात के साधनों के रूप में प्रयोग होता है। बैंगलोर के इंडियन इंस्टीट्यूट आफ मैनेजमेंट के सर्वेक्षण के एक अनुसंधान के अनुसार भारत में 1.5 करोड़ के लगभग बैलगाड़ियां हैं। इस प्रकार इनमें 4000 करोड़ रुपये की पूंजी है। इतना अधिक वजन ढोया जाता है जितना कि हमारी पूरी रेल व्यवस्था भी बोझा नहीं ढो सकती है। शहरों में घोड़ों से तांगे खींचे जाते हैं। गांवों में गधों से बोझा ढोने का कार्य लिया जाता है। कहीं-कहीं गांवों में भैंस गाड़ियां भी बोझ ढोने का कार्य करती हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आगामी 50 वर्षों तक पशु धन का यातायात में महत्व होगा।

(5) कृषि में उपयोगी

भारत कृषि प्रधान देश है तथा उसमें भी 80 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। बीज बोने से लेकर फसल की कटाई तथा उसमें उत्पादित फसल को मंडी ले जाने तक पशुधन का उपयोग होता था लेकिन अब कहीं कहीं पर उनका स्थान यंत्रों ने ले लिया है। कृषि कार्यों में शक्ति की पूरी पूर्ति बैलों द्वारा की जाती है। पहाड़ी इलाकों और बैलों की अनुपस्थिति में भैंसों के द्वारा भी कृषि कार्य किए जाते हैं। वास्तव में अभी भी पशुधन के विशेषतः बैलों के बिना हमारा किसान अधूरा है।

(7) कुटीर उद्योगों का आधार

पशुओं से हमें चमड़ा व मांस प्राप्त होता है। पशुओं की खाल कई कुटीर उद्योगों में प्रमुख भूमिका अदा करती है। गांवों में मोची इनके जूते बनाता है। देश का चमड़ा उद्योग इन्हीं से चलता है। भेड़ व ऊंट की ऊन से ऊनी वस्त्र व गलीचे आदि बनते हैं। दूध से डेयरी उद्योग, मछली से खाद्य पदार्थ व कई प्रकार के तेल भी बनते हैं।

राष्ट्रीय आय में बढ़ोतरी

भारत में कुल राष्ट्रीय उत्पादन का आधा भाग कृषि क्षेत्र से होता है और कृषि क्षेत्र का पांचवां हिस्सा पशुओं से प्राप्त होता है। इस प्रकारी हमारी राष्ट्रीय आय बढ़ोतरी में पशुधन का महत्वपूर्ण योगदान है। पशुओं से प्राप्त विभिन्न पदार्थों का हम निर्यात भी करते हैं जिनसे हमें विदेशी मुद्रा भी मिलती है। पशुधन का उपयोग बेरोजगारी दूर करने से व अल्प रोजगार प्रदान करने में भी लिया जा सकता है। प्रत्येक बेरोजगार व्यक्ति को अगर प्रोत्साहन देकर पांच पशुओं को पालने में लगा दिया जाए तो एक परिवार का पालन पोषण हो जाता है। तथा अन्य व्यक्ति अपने खाली समय में पशु पालन व्यवसाय में लगें तो अतिरिक्त आमदनी हो सकेगी जिससे हमारी राष्ट्रीय आय में बढ़ोतरी होगी।

पशु पालन व्यवसाय की उन्नति हेतु सुझाव

(1) चारे की व्यवस्था उचित रूप से की जाए। योजना पूर्वक उपलब्ध चारे को मितव्ययिता पूर्वक उपयोग करना तथा जहां कमी है वहां पूर्ति बढ़ाना। गांव में बेकार भूमि में चारे उगाने की व्यवस्था करना। जंगलों में सूखकर बर्बाद होने वाली घास को बचाना। चारा उगाने में आधुनिक तकनीकों का उपयोग करना।

(2) पशुओं की नस्ल सुधारने के लिए वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग करना पड़ेगा, गांवों में उत्तम नस्ल के पशुओं के बारे में प्रदर्शनियों तथा चलचित्रों के माध्यम से जानकारी देनी चाहिए। किसानों के लिए पंचायत तथा सहकारी समितियों के माध्यम से अच्छे नस्ल के सांड उपलब्ध कराने चाहिए तथा गांव के बेकार व नपुंसक सांडों को वहां से हटा देना चाहिए।

(3) पशुओं में बीमारियां न फैलें इसके लिए निवारक तथा उपचारक दोनों प्रकार के उपाय करने चाहिए। पशुओं के लिए पौष्टिक चारा, रोग निरोधक टीके, चल पशु चिकित्सालय की व्यवस्था करना तथा गांवों के पशुओं

(शेष पृष्ठ 51 पर)

राजस्थान में ग्रामीण विकास की नई योजना "अपना गांव अपना काम"

राजेश कुमार गौतम

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत गांवों का देश है। भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है। जब तक भारत में गांवों का विकास नहीं होगा तब तक भारत का विकास भी असम्भव है। सम्भवतः इसी बात को काफी देर बाद समझते हुए भारत सरकार एवं राज्य सरकारों ने अपने बजट की कुल राशि का 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में व्यय करने का निर्णय लिया है।

लेकिन केवल ग्रामीण क्षेत्रों में धन व्यय करने की घोषणा मात्र से ही विकास नहीं होता वरन् उसके लिए दृढ़ राजनीतिक इच्छा होना भी अनिवार्य है तथा इसके साथ ही आवश्यक है कि योजना से लाभान्वित होने वाले लोग भी उस योजना में प्रत्यक्ष रूप से वित्तीय योगदान दें क्योंकि जब तक वित्तीय सम्बन्ध नहीं होता तब तक कुछ दायित्व निर्वाह व जिम्मेदारी की भावना का बोध नहीं होता।

विकास की प्रक्रिया में इस बात को ध्यान में रखते हुए राजस्थान सरकार ने एक नई योजना का श्रीगणेश नववर्ष के प्रारम्भ के साथ ही किया। ग्रामीण विकास में जब तक जनता की पूरी भागीदारी नहीं होती तब तक न तो आत्मनिर्भरता आती है और न ही धनराशि का पूर्ण सदुपयोग होता है और न ही वांछित विकास हो पाता है। विकास सही तौर पर तभी सार्थक होता है जब जनता और सरकार कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य करती है। इसी उद्देश्य से ही राजस्थान सरकार ने इस योजना को प्रारम्भ किया है।

योजना का वित्तीय प्रावधान

इस नवप्रचर्तित योजना को 1 जनवरी, 1991 से आरम्भ कर जन समुदाय को विकास की प्रक्रिया में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया है। इस योजना के लिए 30 प्रतिशत धनराशि जन सहयोग से तथा 70 प्रतिशत धनराशि राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध करवाई जाएगी। इस योजना के प्रारम्भिक वर्ष 1991 में प्रत्येक विधानसभा क्षेत्र के लिए 10 लाख रुपये का प्रावधान किया गया है।

वर्ष 1992 के लिए 50 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इस राशि से ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न विकास कार्य सम्पादित किए जाएंगे। इस कार्य के लिए 10 करोड़ रुपये का विशेष प्रावधान किया जाएगा। 15 करोड़ रुपये जन सहयोग से तथा 25 करोड़ रुपये की राशि जवाहर रोजगार योजना में उपलब्ध कराई जाएगी।

योजना की प्रक्रिया

इस कार्यक्रम के लिए 30 प्रतिशत राशि स्थानीय समुदाय ग्राम पंचायत या पंचायत समिति द्वारा जन सहयोग के रूप में उपलब्ध कराई जाएगी तथा शेष 70 प्रतिशत राशि राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाएगी। ग्राम पंचायत या पंचायत समिति द्वारा सर्वप्रथम जिला ग्रामीण विकास अभिकरण में 10 प्रतिशत योगदान राशि जमा करवानी होगी तथा यह लिखकर देना होगा कि शेष 20 प्रतिशत राशि सामग्री या नकद के रूप में उनके द्वारा द्वितीय व तृतीय किश्त लेने से पूर्व जमा करवा दी जाएगी। कुल लागत की 10 प्रतिशत राशि जमा होने पर जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा कार्य की स्वीकृति जारी की जाएगी। ग्राम पंचायत द्वारा जमा कराई गई राशि सहित कुल लागत की 30 प्रतिशत राशि स्वीकृति के साथ ही कार्य सम्पादन करने वाली ग्राम पंचायत या पंचायत समिति को दे दी जाएगी। द्वितीय व तृतीय किश्त लेने से पूर्व सम्बन्धित एजेंसी को 10-10 प्रतिशत राशि 2 किश्तों में जमा करानी होगी। उसी के आधार पर जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा उन्हें कुल लागत की 30-30 प्रतिशत राशि द्वितीय व तृतीय किश्त के रूप में दे दी जाएगी। शेष 10 प्रतिशत राशि कार्य समाप्त होने पर उपयोगिता प्रमाण-पत्र देने के बाद दी जाएगी।

कार्यों का सम्पादन एवं प्रकृति

योजनान्तर्गत कार्य का सम्पादन ग्राम पंचायत या पंचायत समिति द्वारा करवाया जाएगा। यदि ग्राम पंचायत यह प्रस्ताव करती है कि उसके द्वारा पारित प्रस्ताव को मनोनीत 5 सदस्यों की भवन निर्माण समिति द्वारा करवाया जाए तो निर्माण कार्य इस समिति द्वारा भी सम्पादित किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत राजकीय सहायता ग्राम पंचायत के माध्यम से भवन निर्माण समिति को दी जाएगी।

यदि कोई धमार्थ ट्रस्ट या पंजीकृत समिति इस कार्य को करना चाहे, तो 30 प्रतिशत राशि उपरोक्तानुसार 3 किश्तों में देकर कर सकती है। इसके उपरान्त कार्यों की स्वीकृति जिला ग्रामीण विकास अभिकरण द्वारा जारी की जाएगी। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जवाहर रोजगार योजना के लिए जारी किए गए निर्देशों के अनुसार ही निर्माण कार्य होंगे। कार्यों के चयन में उन गांवों को प्राथमिकता दी जाएगी जहां एन. आर. ई. पी. अथवा जवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत कोई काम न हुआ हो, बशर्ते योजना में सम्बन्धित ग्राम के निवासी निर्धारित योगदान की राशि उपलब्ध कराने को तैयार हो।

योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र में विकास के कार्यों के चयन का दायित्व ग्राम पंचायत पर होता है जो अपने क्षेत्र में स्वतंत्र होती है। इस योजनान्तर्गत सड़क निर्माण, शाला निर्माण, खरन्जे निर्माण, नालियों का निर्माण, पेयजल कूप, टंकी व तालाब निर्माण तथा अन्य सार्वजनिक कार्य करवाए जा सकते हैं।

विकास कार्यक्रम एवं जन उत्तरदायित्व

चूंकि इस कार्यक्रम में ग्रामीण जनता अपने विकास कार्यक्रमों में प्रत्यक्ष वित्तीय योगदान देती है। अतः वह स्वयं को कार्यक्रम से जुड़ा हुआ महसूस करती है। वह इस बात के प्रति सजग रहती है कि उसके खून पसीने की कमाई व्यर्थ न जाने पाए और उसका दुरुपयोग न हो एवं उसका लाभ गलत हाथों में न पहुंच जाए। जब जनता में कार्यक्रमों के प्रति लगाव महसूस होने लगता है तब विकास की गति तीव्र एवं पथ सरल हो जाता है।

प्रत्यक्ष वित्तीय योगदान देने से जनता समय-समय पर ग्राम पंचायत से कार्य के विकास की रिपोर्ट लेने में सक्षम होती है और समय-समय पर रिपोर्ट लेकर कार्य का मूल्यांकन करती रहती है।

इस योजना का राजस्थान की जनता ने भारी स्वागत किया है। राजस्थान सरकार ने 1977 में अन्त्योदय योजना चलाई थी जिसके परिणामों से प्रभावित होकर जनता ने उस योजना के पुनः शुरू किए जाने का भारी स्वागत किया। उसी तरह की एक अन्य योजना "अपना गांव अपना काम" की शुरुआत करके राजस्थान सरकार ने जनता को विकास की प्रक्रिया से सीधा जोड़ने का प्रयास किया है।

योजना के लाभ

किसी भी योजना का मूल्यांकन उससे होने वाले लाभों से ही होता है। इस योजना का मुख्य लाभ सरकार को यह होगा कि सरकार पर आर्थिक दबाव में कमी होगी। 30 प्रतिशत राशि जनसहयोग से प्राप्त होने से सरकार अपनी पूर्ण क्षमता से सवागुना अधिक कार्य करने में सक्षम होगी तथा विकास के रथ को तीव्र गति देने में सक्षम होगी।

ग्रामीण क्षेत्र में जनता को यह लाभ होगा कि वह अपनी योजनाओं के प्रति सजग रहेगी तथा विकास कार्यों के चयन में स्वतंत्र होगी।

जनता की इस सजगता से सरकार भ्रष्टाचार पर भी नियंत्रण में सक्षम रहेगी।

इस तरह इस नई योजना के विभिन्न आयामों को देखते हुए आशा है कि अब राजस्थान में ग्रामीण विकास के रथ का चक्र विकास के राजपथ पर तीव्रतम गति से गतिशील हो उठेगा।

क्वाटर नं: 4 पंचायत समिति
राजगढ़ (अलवर) राज.-301408

(पृष्ठ 49 का शेष)

को रोगों से बचाने के लिए जागृति पैदा करना। जिससे कि वे रोगी पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग रखें, उनमें समय-समय पर टीके लगवाएं, साफ जगह पर नहलायें तथा साफ पानी पिलवाएं। पशु प्रदर्शन एवं मेलों के माध्यम से स्वास्थ एवं उत्तम पशु रखने वाले और ज्यादा दूध देने वाले ऐसे मालिकों को पुरस्कार देकर सबकी रूचि बढ़ाई जाए। पशु पालन व्यवसाय की उचित शिक्षा एवं उससे होने वाले लाभों की जानकारी देनी चाहिए। पशुपालकों की सहकारी समितियां भी गठित की जानी चाहिए जो उनके इस धन्धे को लाभकारी बना सके।

सहायक प्रोफेसर
वि. वि. महारानी कालेज,
1314, अजायब घर का रास्ता, जयपुर-3

सहकारी आन्दोलन : विविध आयाम

राम कुमार 'सेवक'

पूरे विश्व का मानव समुदाय रहन-सहन के आधार पर गांवों और शहरों में निवास करता है। भारत गांवों का देश है और इसमें लगभग 5.75 लाख गांव हैं। गांव और नगर के रहन-सहन में बहुत भिन्नता देखने में आती है। गांव के निवासी जहां कठिनतर व असुविधापूर्ण जीवन में भी सरलता लिए होते हैं वहीं नगरों के निवासी इसके विपरीत प्रकृति के पाए जाते हैं।

पहले मनुष्य का जीवन घुमक्कड़ का जीवन था। वह एक स्थान पर टिक कर नहीं रहता था। वह घूम-घूम कर और शिकार करके अपनी जीविका चलाता था। अपने जीविकोपार्जन के अनुसार पेड़ों पर या गुफाओं में रहता था। कालान्तर में उसने कृषि की शुरुआत की। जंगलों में रहने के कारण कृषि की ओर उसका ध्यान जाना स्वाभाविक ही था। कृषि की शुरुआत होने पर उसने अपने खेतों के निकट ही अपने निवास स्थान बनाए। वे मकान पहले कच्चे रहे होंगे या पेड़ों की डालों से बनाए गए होंगे। जब कुछ मनुष्य एक साथ एक ही क्षेत्र में रहने लगे तो गांव अस्तित्व में आए और घुमक्कड़ मानव को टिकना नसीब हुआ। सामान्य रूप से आधुनिक मानव सभ्यता का विकास गांवों से प्रारम्भ होता है।

गांवों में मुख्य व्यवसाय कृषि ही है। कई विद्वान गांवों और कृषि को एक-दूसरे का पूरक मानते हैं।

जनगणना के अनुसार हमारे देश की कुल जनसंख्या के 70 प्रतिशत व्यक्ति अपनी जीविका के लिए प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर हैं। इससे स्पष्ट है कि कृषि भारत का सबसे महत्वपूर्ण व सबसे बड़ा व्यवसाय है।

कृषि के साथ ही गांव में कई छोटे-छोटे उद्योग भी होते हैं, जैसे—मछली पालन, मुर्गी पालन, सोनारी, लोहारी, चर्म कार्य, फल उत्पादन, तेल पेरना, गुड़ बनाना, मधुमक्खी पालन, साग-सब्जी उगाना, ग्रामीण हस्तकला आदि।

ग्रामीण समाज में हर व्यक्ति की जरूरतें एक-दूसरे की सहायता से ही पूरी होती हैं। विभिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न योग्यताओं वाले होते हैं और काम पड़ने पर एक-दूसरे की सहायता भी करते हैं। इस प्रकार एक-दूसरे की जरूरतें आपस में पूरी कर लेने से एकता की भावना बनी रहती है। एक-दूसरे से सहयोग व प्रेमभाव बना रहता है। इस प्रकार ग्रामवासी सामुदायिक भावना से युक्त होते हैं।

स्वतंत्रता से पूर्व इन विशेषताओं के होने के बावजूद हमारे गांवों की स्थिति शोचनीय थी। सम्पन्न लोग उनका शोषण करते थे। जिससे न तो वे अपनी कृषि का विकास कर सकते थे न ही अपनी उपज का पूरा मूल्य ले पाते थे। उनकी उपज व श्रम का लाभ कुछ सीमित लोग ले पा रहे थे जिससे किसान की स्थिति निरंतर बिगड़ती जा रही थी।

यद्यपि सहकारिता से सम्बन्धित अधिनियम, 1904 में ही स्वीकृत हो चुका था जिसका उद्देश्य गांवों में ऋणग्रस्तता की समस्या को सुलझाना तथा ऋण समितियों की स्थापना करना था। यह अधिनियम व्यवहार में नहीं आ पाया जिससे ग्रामीणों की स्थिति में कोई महत्वपूर्ण सुधार नजर नहीं आया।

स्वतंत्रता के पश्चात हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू हुए। नेहरू जी भारत की जनता से खूब परिचित थे। उन्होंने स्वराज आन्दोलनों के दौरान गांवों की स्थिति को निकट से देखा था। वे कहा करते थे कि मुझे बापू ने एक कसौटी दे रखी है कि कोई भी काम करते समय अपने ध्यान में उस आदमी की सूरत लाओ, जिसे तुमने सबसे गरीब, दुखी और बेसहारा देखा हो। काम करते हुए अपने आपसे पूछो कि क्या इस काम का फायदा उसे मिलने वाला है?

मार्च 1950 में नेहरू जी ने पंचवर्षीय योजनाओं का शुभारम्भ किया। जिसका उद्देश्य देश में सर्वांगीण व सन्तुलित विकास की प्रक्रिया शुरू करना था। पहली योजना में कृषि विकास व ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योग व सिंचाई सुविधाओं के लिए लगभग 766 करोड़ रुपये की धन राशि सुरक्षित रखी गई थी, जो कि नेहरू जी के प्रयासों का महत्व प्रतिपादित करती है।

सहकारी आन्दोलन मुख्यतः सहयोग के विचार पर आधारित है। हर व्यक्ति में कुछ योग्यताएं और कुछ अयोग्यताएं होती हैं अर्थात् कुछ कार्यों को वह नहीं कर पाता और कुछ कार्यों को करने में विशेषतः सक्षम होता है। जब

किसी समुदाय के लोग मिल-जुलकर योजनाएं बनाते और क्रियान्वित करते हैं, जिनसे सभी की उन्नति हो और पूरे समाज में समृद्धि आए तो सहयोग पर आधारित इस आन्दोलन को सहकारिता अर्थात् सहकारी आन्दोलन कहते हैं।

सहकारिता के अन्तर्गत पूरे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी बैंकों की स्थापना की गई। जिनका उद्देश्य है—कृषि और इससे सम्बन्धित क्रियाकलापों को बढ़ावा, ग्राम आधारित उद्योगों का विकास तथा शहरी केन्द्रों के उद्योग व व्यापार को ग्रामीण विकास के लिए उन्मुख करना।

1 जुलाई 1969 को श्रीमती इन्दिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में 14 व्यावसायिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया जिसमें इन बैंकों के दरवाजे भी जनसामान्य के लिए खुल गए। राष्ट्रीयकरण का ध्येय था—

अर्थव्यवस्था को ऊंचाई पर पहुंचाना,
प्रगतिशीलता की नीति और बेहतर सेवा तथा
अर्थव्यवस्था के विकास के लिए राष्ट्रीय नीति।

व्यावसायिक बैंकों को चार क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है—लोक क्षेत्र के बैंक, निजी क्षेत्र के बैंक, विदेशी बैंक तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक। ये क्षेत्र सहकारी बैंकों के अतिरिक्त हैं।

लोक क्षेत्र के बैंकों की संख्या 28 है, जो कि रिजर्व बैंक आफ इन्डिया के नियंत्रण में काम करते हैं। ये बैंक पूरे बैंकिंग जगत का 90 प्रतिशत व्यवसाय करते हैं। इन बैंकों की ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि विकास शाखाएं हैं जो कि कृषि विकास व कृषकों का जीवन स्तर सुधारने के लिए कार्यरत है।

सहकारी बैंकों का एक मुख्य कार्य यह भी है कि वे अब तक आर्थिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों के छोटे स्तर पर कर्जा लेने वालों के लिए ऋण की व्यवस्था करते हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बैंकों ने अनेक प्रकार की योजनाएं बनाई हैं ताकि कृषि, लघु उद्योग, सड़क परिवहन, छोटे और खुदरा दुकानदारों को ऋण मिल सके।

ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी बैंकों का द्रुत गति से विस्तार हुआ है। इनसे पूर्व भूमि बन्धक बैंकों की स्थापना भी की गई थी, जो कि किसानों की दीर्घकालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूर्ण व्यवस्थित थे। इस व्यवस्था के अन्तर्गत किसान अपने खेत को बन्धक रखकर बैंक से ऋण ले सकते थे। अब इन बैंकों को भूमि विकास बैंकों में परिवर्तित कर दिया गया है। इन बैंकों से जो ऋण लिया जाता है उसे लौटने के लिए समय भी काफी दिया जाता है। ऋण अधिकतर उपयोगी कार्यों के लिए ही दिया जाता है।

ग्रामीणों की समस्या सिर्फ ऋणग्रस्तता ही नहीं है, उनकी अनेक अन्य समस्याएं हैं, जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध उनकी रोजी, रोटी से है। उन समस्याओं में प्रमुख हैं—कृषि उत्पादनों को गोदामों में रखना, उनका क्रय-विक्रय करना, अच्छे बीज, औजार, मशीनें, खाद आदि खरीदना, पशुओं की सुरक्षा, पशुओं की वृद्धि और खरीदने की व्यवस्था करना। भूमि विकास बैंकों ने इन कार्यों में उल्लेखनीय योगदान दिया है।

सहकारिता के अन्तर्गत उपभोक्ता भंडार, सहकारी बाजार तथा विभागीय उपभोक्ता भण्डारों में कुल मिलाकर 20,000 से ज्यादा लोगों को रोजगार मिला है। इस सम्बन्ध में राज्यों में 37 नई योजनाओं के माध्यम से भी काम हो रहा है। खाद, बीज, कीट नाशक दवाएं, कृषि उपकरण आदि कृषकों को सुलभ कराए जा रहे हैं।

अप्रैल 80 में 6 और बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया जिससे ग्रामीण विकास में बैंकों की भागीदारी और अधिक बढ़ी है। 22 जुलाई 82 को कृषि और ग्रामीण विकास राष्ट्रीय बैंक (नाबार्ड) की स्थापना की गई ताकि ग्रामीणों के विकास में तेजी आए और कृषि, लघु उद्योग, ग्रामीण उद्योग (मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, बुनकर, उद्योग आदि), हस्तशिल्प, (ग्रामीण दस्तकारी, बढ़ई गिरी, रंगसाजी, कशीदाकारी आदि) तथा अन्य सम्बद्ध आर्थिक क्रियाकलाप विकसित हों और समेकित ग्रामीण विकास किया जा सके।

इस प्रकार आज हमें गांव समृद्ध और विकसित दिखाई देते हैं। किसानों के घर भी बिजली से जगमगाते हैं। जहां पहले अंधेरे और कीचड़ का साम्राज्य था, अब अधिकतर गांव सड़कों व खड़ंजों से जुड़े हैं। विकास योजनाओं का लाभ जनसाधारण तक पहुंचा दिखाई पड़ता है। आज का किसान काफी समझदार हो गया है। वह अपनी भलाई-बुराई समझता है। वह अपनी उपज का सही प्रकार भंडारण करने की क्षमता भी रखता है और उचित समय देखकर अपनी उपज बाजार में निकालता है। सिंचाई के लिए वह अब पूर्णतः वर्षा पर निर्भर नहीं रह गया है। नलकूपों के माध्यम से पूरे देश में हरित क्रांति आई है। सरकार ने कृषि को काफी महत्व दिया है जिससे सिर्फ कृषकों में ही नहीं बल्कि उनके द्वारा सभी सम्बन्धित वर्गों में खुशहाली आई है।

593, खटीकान, रावली रोड मुरादनगर
(गाजियाबाद) 201206

बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण

मनोज कुमार श्रीवास्तव

बैंकिंग का क्षेत्र किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के लिए बड़ा ही महत्वपूर्ण होता है। किसी भी विकसित और विकासशील देश के लिए, उसकी अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ता के लिए निर्विवाद रूप से बैंकिंग तंत्र की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

राष्ट्रीयकरण के उद्देश्य

भारत में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पीछे जो प्रमुख उद्देश्य थे उनमें देश की प्राथमिकताओं और लक्ष्यों के प्रति अनुकूल अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं को पूरा करना, जनता में विश्वास पैदा करना, विदेशी व्यापार में सहयोग देने वाली संस्थाओं को वित्तीय सहायता सम्बन्धी सुविधाओं को प्रभावशाली ढंग से सुनिश्चित करना और इसके साथ-साथ अस्वस्थ प्रतियोगिता को समाप्त करना था।

19 जुलाई 1969 को केन्द्रीय मंत्रिपरिषद की सलाह से देश के 14 प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण करने का अध्यादेश जारी किया गया था। पुनः 15 अप्रैल 1980 को 6 और बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। इस प्रकार समाज के प्रति बैंकों की जिम्मेदारी बढ़ती ही गई। पहले बैंक केवल लोगों के धन का संरक्षक हुआ करता था लेकिन अब वह समाज की आकांक्षाओं का भी संरक्षक है।

यह लम्बे समय तक प्रसार, पुनर्गठन तथा दो दशकों से भी अधिक समय तक हुए एकीकरण का प्रतिफल है। भारत के वाणिज्यिक बैंकों का वर्तमान स्वरूप आज वाणिज्यिक बैंकिंग का प्रमुख आकर्षण है, निजी क्षेत्रों तथा सार्वजनिक क्षेत्रों का सह-अस्तित्व है।

वर्तमान में 28 राष्ट्रीयकृत बैंक देश की अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक क्षेत्र की भागीदारी को शक्ति प्रदान कर रहे हैं। यद्यपि यह बात अलग है कि यह सब विभिन्न समयों पर, विभिन्न उद्देश्यों के तहत किया गया।

बैंकों के राष्ट्रीयकरण से बैंक अपने लाभार्जन तथा उनका लाभकारी योजनाओं में उपयोग करने के उद्देश्य के अतिरिक्त एक और उद्देश्य लेकर चल रहे हैं और वह हैं सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास का।

राष्ट्रीयकरण के बाद लगातार राष्ट्रीय बचत में वृद्धि हुई है। इसका एकमात्र कारण बैंकों का समाज के प्रत्येक व्यक्ति तक अपनी पहुंच बनाना है। चौदह बैंकों के राष्ट्रीयकरण से 5000 करोड़ रुपये की जमा पर नियंत्रण प्राप्त करने में सरकार को सफलता मिली। इससे सार्वजनिक क्षेत्र को वित्त के नए साधन प्राप्त हुए हैं।

गांवों और शहरों के विकास में बैंक पहले से ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। राष्ट्रीयकरण के बाद कृषि और ग्रामीण विकास में तीव्रता आई है। गरीब, अनुसूचित जाति-जन जाति के लिए बैंकों ने न्यूनतम ब्याज दर पर ऋण देने की योजनाएं बनाई।

अब तो बैंकों ने शिक्षा तक को साख का आधार बना लिया है। तीव्र विकास व सामाजिक उत्थान के लिए स्थानीय स्तर की विषमताओं को दूर करने का प्रयास किया गया। अच्छी ग्राहक सेवा के लिए बैंकों में होड़-सी लग गई है।

आर्थिक सेवाएं देने के साथ-साथ बैंक आज सामाजिक सेवाएं भी प्रदान कर रहे हैं। रचनात्मक कार्य करने वालों को प्रोत्साहित किया जा रहा है। बैंकों के ऐसे स्वरूप की संरचना राष्ट्रीयकरण के कारण ही सम्भव हुई है।

सामाजिक नियंत्रण की आवश्यकता

जहां तक बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण का प्रश्न है तो इस विषय में सभी जानते हैं कि किसी भी राष्ट्र के लिए समाज उसकी आत्मा के समान होता है। जब समाज नियंत्रित होगा तो निश्चय ही राष्ट्र की प्रगति सुनियोजित ढंग से सुनिश्चित होगी। सामाजिक नियंत्रण का तात्पर्य है—समाज के नियंत्रण में होना। इस नियंत्रण से बैंकों के कार्य समाज हित में तथा राष्ट्र हित में होंगे। यदि बैंकों को सरकार द्वारा नियन्त्रित किया जाता है तो उस पर समाज का या जनता का अप्रत्यक्ष नियंत्रण तो हो ही जाता है और उनके द्वारा किया जाने वाला प्रत्येक कार्य राष्ट्र हित में ही होगा।

चूंकि बैंक धन का ही व्यापार करता है इसलिए यह समाज का आधार है। यदि बैंकों को पर्याप्त नियंत्रण में रखा जाता है तो समाज की गतिविधियों पर नियंत्रण करने में भी सुविधा होगी।

सामाजिक नियंत्रण की प्रक्रिया के अन्तर्गत बैंकों ने अपनी कार्य प्रणाली को परिवर्तित किया, साथ ही साथ अपने उद्देश्यों में भी परिवर्तन किया है। अब उसका लक्ष्य है सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास करना। इसके परिणाम बड़े ही अच्छे निकले हैं। समाज के ऐसे वर्ग जो कि वित्तीय सुविधाओं के अभाव में अपनी रचनात्मक योग्यता का उपयोग नहीं कर पा रहे थे, उन्हें भी अपना आर्थिक और सामाजिक स्तर सुधारने का अवसर मिला है। बेरोजगारों के लिए स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध हुए हैं। कृषि के सुधार के लिए अनेक प्रकार की वित्तीय सुविधाओं को प्रदान किया गया है, कुछ प्रत्यक्ष तो कुछ अप्रत्यक्ष, लघु एवं फुटकर व्यवसायियों, शिल्पकारों, परिवहन चालकों, खेतिहर मजदूरों आदि में ऋण का वितरण किया गया।

गरीब जनता को भवन निर्माण में सहायता देने के लिए 1988 में राष्ट्रीय आवास विकास बैंक की स्थापना की गई जिसका कार्य ऐसे बैंकों का दिशा-निर्देशन और वित्तीय सहायता करना है जो कि भवन निर्माण के लिए ऋण देते हैं और अनुसूचित जाति, जनजाति के आर्थिक स्तर को सुधारने के लिए विशेष ध्यान रखते हैं। उनके लिए कम ब्याज दर पर ऋण सुविधाएं देने की योजनाएं बनाई गई हैं।

सामाजिक नियंत्रण की सफलता

बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण होने से धन के केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति पर रोक लगी है। इसके पूर्व बैंक धन का उपयोग बड़े व्यवसायों और उद्योगों द्वारा अधिक किया जाता था। इसके अतिरिक्त चूंकि अब ब्याज दर का निर्धारण बैंक स्वयं नहीं कर पाते, इसलिए साख नियंत्रण की समस्या को नियंत्रित करने में भी सहायता मिली है। अब रिजर्व बैंक द्वारा राष्ट्र हित को देखते हुए साख नियंत्रण और साख विस्तार किया जाता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों द्वारा अपनी शाखाएं खोले जाने से गांवों में कृषकों को वित्तीय सहायता सरलता से प्राप्त हो रही है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है जिससे राष्ट्र के सकल उत्पादन में वृद्धि के साथ ही साथ राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि हुई है। इसके अतिरिक्त पलायनवादी दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आया है जो लोग गांवों से शहरों की तरफ भाग रहे थे उनकी सोच में परिवर्तन आया है।

गांवों में बैंकों के खुलने से हस्तशिल्प, कुटीर एवं लघु उद्योग और ग्रामीण कारीगरों को अपनी कला का, अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने का, उसे प्रोत्साहित करने का अवसर मिला है। ग्रामीण अंचलों में ही रोजगार प्राप्त हो जाने के कारण उनमें गांव से पलायन करने की प्रवृत्ति पर रोक लगी है।

हमारे देश में विकलांगों की संख्या कम नहीं है। समाज में उन्हें दया और सहानुभूति तो मिल जाती है लेकिन वित्तीय सहायता देने वाला कोई नहीं होता। इसलिए बैंकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वह उनकी सहायता करेगा। इस क्षेत्र में बैंकों ने उनके लिए चाय, सब्जी, किराने आदि की दुकान लगाने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान की है। यही नहीं विकलांगों के कल्याण में लगी विभिन्न संस्थाओं को भी वित्तीय सहायता प्रदान कर उनके लिए कृत्रिम अंगों के निर्माण में सहायता कर रहे हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय बैंकिंग आज बैंकों के कार्यों का महत्वपूर्ण भाग है। विदेशों में नए बाजारों का पता लगाना, स्थापित करना, प्रोत्साहित करने के लिए वित्तीय सुविधाएं देना तथा विदेशों में रहने वाले लोगों को विनियोग और जमा सम्बन्धी सुविधाएं देना, यह सब बैंकों के कार्य क्षेत्र में सम्मिलित है।

भारत में आयात अधिक होने के कारण विदेशी ऋण का बोझ बढ़ता जा रहा है। सामाजिक नियंत्रण के माध्यम से बैंकों ने निर्यात में लगे उद्योगों को वित्तीय एवं अन्य सुविधाएं देना प्रारम्भ किया तथा उनका विकास किया। ये भुगतान सन्तुलन की समस्या हल करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

नवोन्मेष बैंकिंग के क्षेत्र में भी बैंकों ने महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। इस क्षेत्र में बैंक परम्परागत ढंग से ऋण देने के अतिरिक्त कुछ प्रयोगवादी और कुछ तो बिल्कुल नए क्षेत्रों में ऋण प्रदान कर रहे हैं जिसका लक्ष्य पूर्णतया समाजोत्थान है न कि लाभार्जन।

बैंकों के प्रबन्ध और ऋण योजनाओं में परिवर्तन, बैंकों का समाज के प्रति कर्तव्य, निष्ठा और सेवा भावना को स्थापित करना ही सामाजिक नियंत्रण का उद्देश्य है।

आशाएं

आज करोड़ों लोगों को बैंक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर रहा है। वह सामाजिक न्याय के साथ प्रगति करने का माध्यम बन गया है। देश की कोई भी समस्या क्यों न हो, चाहे वह आर्थिक हो या सामाजिक, सभी के निदान में बैंक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। आम जनता तक अपनी पहुंच बनाकर राष्ट्रीयकरण और सामाजिक नियंत्रण के द्वारा वे समाज एवं राष्ट्र को नई दिशा प्रदान कर रहे हैं। देश के राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक प्रगति को सुनिश्चित करने में भारतीय बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण काफी सफल रहा है।

आनन्द मार्ग स्कूल के पास
दक्षिणी बेतियाहाता गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

इसे हृदय से लगायें
यह झंडा प्रतीक है
हमारी स्वतंत्रता का,
स्वतंत्रता संग्राम के दौरान शहीद हुए
करोड़ों देशभक्तों की कुर्बानियों का।
आज हम याद करते हैं
उन सभी देशवासियों को
जो सभी भाषाओं और राज्यों के थे,
जिनमें अमीर भी थे और गरीब भी,
पुरुष भी थे और महिलाएं भी,
बूढ़े भी थे और जवान भी,
और जिन्होंने राष्ट्र की सुरक्षा
और खुशहाली की लड़ाई लड़ी।
यह झंडा हमारे दिल में बसता है,
हम इसका सम्मान करते हैं,
यह भारत की शक्ति का प्रतीक है,
और यह हमें एक सूत्र में बांधता है।
इस झंडे के गौरव की रक्षा करें
davp 91/274

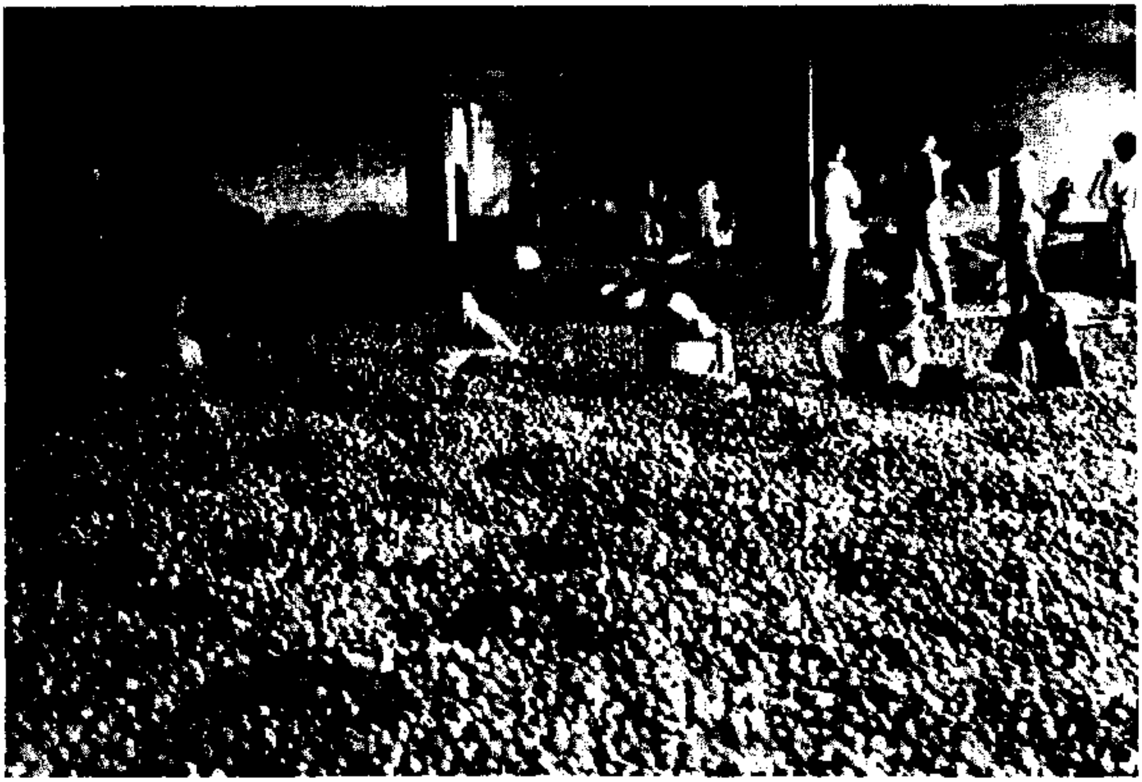

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ., नई दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd No. D (DN) 98
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at NDPSO, New Delhi

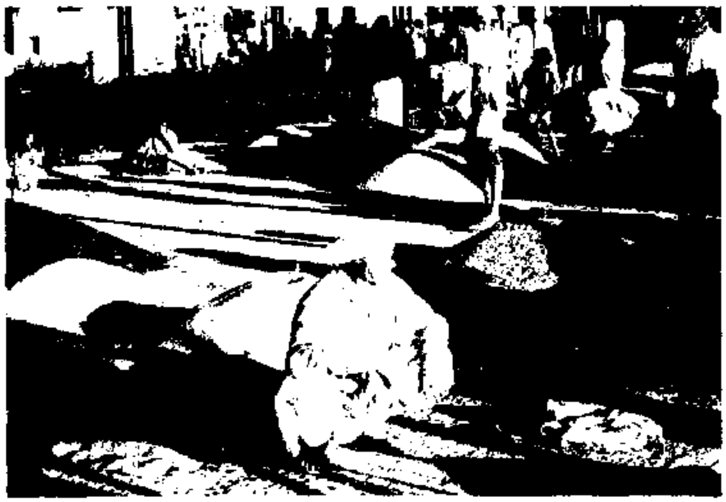

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
तारा आर्ट प्रेस, बी-4, हंस भवन, बहादुर शाह ज़फर मार्ग, नई दिल्ली-110002 द्वारा मुद्रित